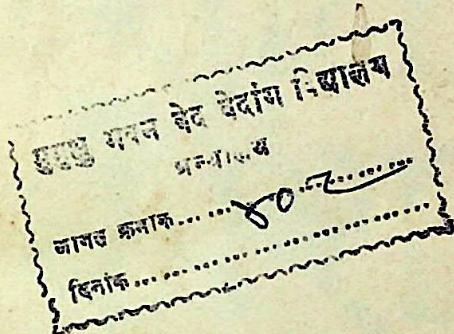

बृहद्
सूक्ति-कोश
5

Q:25x 2098
152L8.5
ना/सं५४

8:25x
152L85
2096

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।





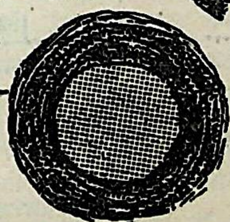
सूक्तियों में नीति के वचन थोड़े शब्दों में गागर में सागर की भाँति बड़ी सुन्दरता से व्यक्त होते हैं। इनमें उपदेश देने की छटा निराली होती है। ये भावों को सजा-संवार कर सजीव बनाने एवं वक्तव्य कला को चमकाने में बड़ी सहायक होती हैं।

—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी

प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-६

खण्ड पाँच

वृहत् सूक्ति कोश



विश्व के लब्ध-प्रतिष्ठ मनीषियों की विशिष्ट सूक्तियों का संदर्भ-ग्रन्थ

सम्पादक
शरण

❀ ... वेदाङ्ग पुस्तकालय ❀

आगत क्रमांक...... 2074 ....

दिनांक........................22/8/81...

प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन
२०५, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली
सर्वाधिकार : प्रकाशकाधीन
सम्पादक : शरण
संस्करण : १९७७
खण्ड : पंचम
मूल्य : प्रभात आफसेट प्रेस, नई दिल्ली-२ ।
मुद्रक : दस रुपये

VRIHAT SOOKTI KOSH : SHARAN : PART V
(A Book of Quotations) Rs.10.00

आमुख

सूक्तियाँ विश्व साहित्याकाश के दैदीप्यमान उज्ज्वल नक्षत्र ही नहीं अपितु मानव के अन्तराल में व्याप्त उल्लास की तरंगों को उद्वेलित करने वाली ऐसी ज्योति हैं जिसकेप्रकाश मेंबुद्धि और हृदय एक साथ आलोकित होते हैं। यदि ये न हों तोसाहित्यनीरस हो जाए और हमारा हृदय स्वर्गिक आनन्द से वंचित हो जाए। जहाँ ये अपने माधुर्य से अन्धकार के आवरण को छिन्न-भिन्न करके उसे प्रकाशित कर सकती हैं, जहाँ ये निराशा के बंधनों में जकड़े हुए पत्रों में समीर की तीव्र गति डाल सकती हैं, जहाँ ये अन्तरतम की असह्य पीड़ा को क्षणमात्र में दूर कर सकती हैं; वहाँ ये गम्भीर से गम्भीर आघात पहुँचाने की भी क्षमता रखती हैं। इस पर भी यही कहना होगा कि ये सूक्तियाँ मानव सृष्टि में कल्पतरु के समान हैं।

इन सूक्तियों की विशाल छाया में विश्राम कर मानव अपने जीवन पथ की थकान को दूर कर भविष्य की दुर्गम यात्रा को शांतिपूर्वक पूर्ण कर लेता है। अतः ये सूक्तियाँ मानव जगत् में ईश के समान ही सर्वव्यापी बन गई हैं। इनकी उपदेशात्मक छटा निराली ही है। इनमें नीति के बचन अल्प शब्दों में गागर में सागर के समान अद्वितीयता से व्यक्त होते हैं। हमारी संस्कृत देव भाषा में तो इनका भण्डार है। अन्य विदेशीय भाषाओं में भी इन पर अच्छी पुस्तकें निकली हुई हैं। हिन्दी में भी इन सूक्तियों पर निकली हुई कई पुस्तकें देखने को मिलीं, पर सभी अपने में अपूर्ण-सी ही थीं। हिन्दी में इस कमी को दूर के लिए मैंने यह क्षुद्र-सा प्रयास किया है। युग-युग के लब्ध प्रतिष्ठ मनीषियों की सूक्तियों के संकलन

में मेरे दस वर्ष बीते हैं। अब इन्हें कुछ-कुछ पूरा कर पाया हूं। अब मेरा प्रयास वृहत् सूक्ति कोश के रूप में आपके हाथ में है।

इस विशाल संदर्भ ग्रन्थ को पाठकों की सुविधा हेतु बारह खण्डों में विभाजित कर दिया है। वृहत् सूक्तिकोश का प्रत्येक खण्ड अपने में पूर्ण है। इसमें लगभग सभी लब्ध प्रतिष्ठ देशी-विदेशी विद्वानों, कवियों, विचारकों संतों एवं दार्शनिकों की मूल व अनूदित सूक्तियों के रूप में अमरवाणी का संकलन है। इसमें मैंने आधुनिक लेखकों की सूक्तियों को भी उसी आदर से संकलित किया है जिस सम्मान से प्राचीन विचारकों एवं लेखकों की सूक्तियों को। प्रत्येक खण्ड के अंत में विषयों की अनुक्रमणिका के साथ-साथ रचयिताओं की तालिका दे दी गई है। इससे पाठकों को विशेष सुविधा मिलेगी।

वृहत सूक्ति कोश का प्रत्येक खण्ड मेरे कृपालु पाठकों चाहे वे शिक्षार्थी हों, चाहे साहित्यकार हों, चाहे प्राध्यापक हों और चाहे राजनीतिज्ञ हों, के हाथों में से गुजरेगा, ऐसा मेरा अटूट विश्वास है। उनसे केवल मेरी सादर अनुनय यही है कि वे इनमें जो अपूर्णता एवं त्रुटि देखें उसके विषय में मुझे सूचित करने की कृपा करें। इनमें अधिक-से-अधिक संशोधन के लिए उदार भाव से मित्रों के परामर्श का स्वागत करूँगा।

विनीत

शरण

विषय-तालिका

धर्म

भारत के लिए तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि इसकी विजय धर्म है।

—जयशंकर प्रसाद (आंधी)

धार्मिक मनुष्य विश्वासी होता है।

—जयशंकर प्रसाद (आंधी)

धर्म को ऐसी कड़ी आज्ञा नहीं है कि वह स्वास्थ्य को नष्ट करके पालन किया जाय।

—जयशंकर प्रसाद (प्रतिध्वनि)

धर्म का फल इस जीवन में नहीं मिलता। हमें आंखें बंद करके नारायन पर भरोसा रखते हुए धर्म मार्ग पर रहना चाहिए।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

धर्म का मुख्य स्तम्भ भय है। अनिष्ट की शंका को दूर कर दीजिए। फिर तीर्थ-यात्रा, पूजा-पाठ, स्नान-ध्यान, रोजा-नमाज, किसी का निशान मात्र भी न रहेगा। मस्जिदें खाली नजर आयेंगी और मन्दिर वीरान।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

धर्म-भीरु प्राणी तार्किक नहीं होता। उसकी विवेचना शक्ति शिथिल हो जाती है।

—प्रेमचन्द (कायाकल्प)

आदमी का धर्म है कि किसी को दुःख में देखे तो उसे तसल्ली दे अगर अपना धर्म पालने में भी कलंक लगता है तो उसे लगने दें।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

धर्म तो व्यापार का शृंगार है।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

हमारे सोये हुए धर्म ज्ञान की सारी सम्पत्ति लुट जाए तो उसे खबर नहीं होती, परन्तु ललकार सुनकर वह सचेत हो जाता है। फिर उसे कोई जीत नहीं सकता।

—प्रेमचन्द (पंच परमेश्वर)

हमारा धर्म है हमारा भोजन। भोजन पवित्र रहे फिर हमारे धर्म पर कोई आँच नहीं आ सकती। रोटियाँ ढाल बनकर अधर्म से हमारी रक्षा करती हैं।

—प्रेमचन्द (गोदान)

आदमी का धर्म है जिसकी बाँह पकड़े, उसे निभाये। यह क्या कि एक आदमी की जिन्दगानी खराब कर दी और आप दूसरा घर ताकने लगे।

—प्रेमचन्द (गोदान)

धर्म ईश्वरीय कोप है, दैवी वज्र है, जो मानव जाति के सर्वनाश के लिए अवतरित हुआ है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

धर्म परायणता को सहिष्णुता से बैर है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

कुलियों के लिए धार्मिक भोजन शारीरिक भोजन से कम आवश्यक नहीं।

—प्रेमचन्द (गोदान)

धर्म परायणता छल और कुटिलता का दूसरा नाम है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

धर्म हमारी रक्षा और कल्याण के लिए है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

धर्म से ज्यादा द्वेष पैदा करने वाली वस्तु संसार में नहीं।

—प्रेमचन्द (कायाकल्प)

जो धर्म हमारी आत्मा का बंधन हो जाये उससे जितनी जल्दी हम अपना गला छुड़ा लें उतना ही अच्छा है।

— प्रेमचन्द (रंगभूमि)

धर्म का बंधन बड़ा कड़ा होता है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

धर्म निष्ठा नारियों का स्वाभाविक गुण है।

—प्रेमचन्द (नैराश्य लीला)

धरम करना हँसी-खेल नहीं है। धरम वह करता है, जिसे भगवान् ने माना हो।

—प्रेमचन्द (प्रेम का उदय)

धर्मद्रोहियों को मारना अधर्म नहीं है।

—प्रेमचन्द (कायाकल्प)

साम्य धर्म ही मानव का मूल धर्म है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (पाप के खिलाफ)

धर्म की क्षति जिस अनुपात से होती है, उसी अनुपात से आडम्बर की वृद्धि होती है।

—प्रेमचन्द (कर्मभूमि)

जिसका जो कर्मफल है, निर्दिष्ट धर्म है, उसे एक दिन घूम-फिर कर अपने धर्म में आना ही होता है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (गोरा)

धर्म व्यक्ति और समाज की भित्ति पर आधारित नहीं, अपितु व्यक्ति और समाज ही धर्म की भित्ति पर आधारित है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (गोरा)

धर्म को कब्र की बनावट पर बनाकर उसमें सारी जाति को भूतकाल में पूर्ण रूप से बंद करके रखने से उन्नति के मार्ग पर चलना कदापि सम्भव नहीं; उसमें किसी के लिए किसी के साथ मिलने का मार्ग नहीं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (हिन्दू-मुसलमान)

धर्म व्यापार में इसी पाप छिद्र के द्वारा विषय कर्म की सांसारिकता की अपेक्षा तीव्रतर सांसारिकता प्रवेश कर लेती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (संचय तृष्णा)

प्रकृति का धर्म है बंधन और आत्मा का धर्म है मुक्ति।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (विधान)

प्रजा जब एक बार धर्म का रूप धारण करके खड़ी हो जाती है, जब उससे देवता प्रसन्न होने लगते हैं और परलोक का कर्म सँवरता है, तब कोई भी निष्ठुरता असाध्य नहीं रह जाती।

—शरच्चन्द्र (नारी का मूल्य)

धर्म का दण्ड माँ का मुंह नहीं देखता रहता।

—शरच्चन्द्र (रमा)

अधर्म भी धर्म का एक ही रूप है, एक पहलू है। और अन्याय, अधर्म और अक्षमता को क्षमा करके प्रश्रय देना धर्म का ही अनुशासन है।

—शरच्चन्द्र (चरित्रहीन)

मनुष्य का धर्म जब संसार का रूप धारण कर लेता है, तभी वह यथार्थ हो जाता है। जीवन के कर्त्तव्य में फिर कोई संघर्ष या टक्कर नहीं होती।

—शरच्चन्द्र (विप्रदास)

यह हम औरतों का स्वाभाविक धर्म ही है। हम अपने और पराये को एक ही दिन में भूल जाती हैं।

—शरच्चन्द्र (पथ-निर्देश)

दो धर्मों का कभी भी झगड़ा नहीं होता। सब धर्मों का अधर्मों से ही झगडा है।

—विनोबा भावे

धर्म क्रिया मूलक होता है। वह मनुष्य को सुख के पीछे दौड़ाता है और कार्य करने की प्रेरणा देता है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

धर्म वही है जो इहलोक और परलोक में सुख-भोग की प्रवृत्ति दे।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

धर्म की सच्ची साधना प्रत्येक व्यक्ति का निजी विषय होना चाहिए।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

धर्म मनुष्य में विद्यमान जन्मजात-शक्तियों की अभिव्यक्ति मात्र है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत जाग्रत)

प-हित सरिस धरम नहिं भाई।
परपीड़ा सम नहिं अघमाई॥

—तुलसीदास

अन्याय सहकर बैठ रहना,
यह महा दुष्कर्म है।
न्यायार्थ अपने बंधु को भी,
दण्ड देना धर्म है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

जहाँ दया तहं धर्म है, जहाँ लोभ तहं पाप।
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ क्षमा तहँ आप॥

—महात्मा कबीर

जो चीज विकार को मिटा सके, राग-द्वेष को कम कर सके, जिस चीज के उपयोग से मन सूली पर चढ़ते समय भी सत्य पर डटा रहे वही धर्म की शिक्षा है।

—महात्मा गांधी

विशाल व्यापक धर्म है ईश्वरत्व के विषय में हमारी अचल श्रद्धा, पूनर्जन्म में अविचल श्रद्धा, सत्य और अहिंसा में हमारी सम्पूर्ण श्रद्धा।

—महात्मा गांधी

धर्म बाहर ही से लादने की वस्तु नहीं है बल्कि अनुभव करने की चीज है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

धर्म जिन्दगी की हर एक सांस के साथ अमल में लाने की चीज़ है।

—महात्मा गांधी

धर्म न तो एकांत में बैठ कर साधना के फलस्वरूप प्राप्त होने वाली व्यक्तिगत सम्पत्ति है और न सरकार के द्वारा लादा जाने वाला कोई कानून।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

न्याय करना, दया करना और अपने सार्थक प्राणियों को सुखी बनाना, धर्म का मुख्य लक्षण है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

न्याययुक्त व्यवहार करना, सौन्दर्य से प्रेम करना तथा सत्य की भावना को हृदय में धारण करके विनयशील बने रहना ही सबसे बड़ा धर्म है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधकृष्णन्

परमात्मा की दुहाई देकर हम पर आत्मा के बालकों का संहार करना चाहते हैं, धर्म भावना का यह सबसे भयंकर उपहास है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

धर्म भावना संसार का पुनर्निर्माण कर सकती है, शान्त पूर्ण क्रांति पैदा कर सकती है, परन्तु शर्त यही है कि उसको ठीक तरह से आचरण किया जाए।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

शासन व्यवस्था यदि धर्म भावना पर आधारित हो, तो हमारे वर्त्तमान युग के अनेक अभिशाप एवं अवगुण स्वतः मिट जायेंगे।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

हम यदि धर्म के अनुसार जीना व मरना चाहते हैं तो हमारा सबसे पहला कर्त्तव्य यह होगा कि लड़ाई-झगड़े और खून खराबी से दूर रहें।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

प्रत्येक धर्म अपने अनुयायियों के मानसिक एवं सामाजिक विकास का प्रकाश होता है। इसलिए उपलब्ध मतों के स्थानों में बिल्कुल नए मतों को स्थापित करना धृष्टतापूर्ण है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

ईश्वर के अस्तित्त्व में दृढ़ विश्वास होने से जो आचरण स्वभावतः होने लगता है, धर्म उसी को जीवन का आदर्श बनाने की आज्ञा देता है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

महात्मा के लिए धर्म अन्तःप्रेरणा बन जाता है, दूसरों के लिए वह बाह्य नियंत्रण है, सामाजिक रीति अथवा लोकमत का अनुरोध हैं।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

जितने विचारशील मस्तिष्क हैं उतने ही विभिन्न धर्म ईश्वर सम्बन्धी विभिन्न मत उसके गुणों की विभिन्न कल्पनाएँ और सृष्टि तथा प्रलय की उतनी ही धारणाएँ सम्भव हैं।

—डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

दूसरों के धर्म का ज्ञान न होना अन्याय और भूल का स्रोत है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

ईश्वर की सत्य और पवित्रता के साथ सेवा करना और जीवन की सभी घटनाओं में उसकी आज्ञाओं को श्रद्धा के साथ पालन करना ही यथार्थ धर्म है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

धर्म सनातन धर्म सिद्धान्तोंका, धार्मिक परिपाटियोंका एक समूह नहीं है,जब तक उसे जीवन में न उतारा जाय, हमारे दैनिक जीवन की छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी चीज़ के अन्दर चाहे वह राजनीति हो या वाणिज्य सहित्य हो या विज्ञान, वैयक्तिक आचारण हो या राष्ट्रीय कूटनीति—मूर्त्त रूप में न लाया जाय तब तक उसकी सफलता नहीं होती।

—श्री अरविन्द

धर्म हमारे जीवन का पथ प्रदर्शक है। संसार के सभी धर्मों की यही सीख है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

धर्म को पकड़कर रहो, धर्मों को आने दो।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

धर्म की शक्ति ही जीवन की शक्ति है, धर्म की दृष्टि ही जीवन की दृष्टि है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

सनातन धर्म भी विश्वासों और क्रियाओं का समूह नहीं है, वह है एक उच्चतम जीवन।

—श्री अरविन्द

खड्ग की तुला पर रक्त का व्यापार करना ही क्षत्रिय बालक का धर्म है।

—गुरु गोबिन्दसिंह

माता, पिता और गुरु की सेवा में ही मानव की इतिकर्त्तव्यता है। यह साक्षात् परम धर्म है, अन्य तो उपधर्म मात्र है।

—विनायक दामोदर सावरकर

उपनिषदों के परब्रह्मस्वरूप के प्रति उदार विचार तो सनातन धर्म है।

—वियायक वामोदर सावरकर

किसी वस्तु के अस्तित्व और व्यवहार को जो धारण करता है, नियमन करता है, वही उस वस्तु का धर्म है।

—विनायक दामोदर सावरकर

जो भी ज्ञान और नियम सभी ग्रन्थों में प्रतिपादित हैं उनमें से हर एक को सनातन धर्म अर्थात् अपरिवर्तनीय निश्चित सिद्धान्त कहा जा सकता है।

—विनायक दामोदर सावरकर

प्रत्यक्ष, अनुमान और इनसे एकदम प्रतिकूल न जाने वाला आप्त वाक्य अर्थात् शब्द प्रमाण इनके आधार पर जो सिद्ध हो सके तथा प्रयोग करने पर कार्य कारण भाव की कसौटी पर जो खरे उतरे, मानवीय ज्ञान के क्षेत्र में आज जो वैज्ञानिक सत्य उद्घाटित हुए हैं, उन्हें ही हम अपना सनातन धर्म समझते हैं।

—विनायक दामोदर सावरकर

प्रत्यक्षनिष्ठप्रयोगों द्वारा जो नियम मनुष्यजाति ने ज्ञात किए हैं वे आर्य अनार्य, मुसलमानों अथवा यहूदियों के लिए अलग-अलग न होकर मानव-मात्र के लिए पक्षपातविहीन समानता से लागू होते हैं। यही वास्तविक सनातन धर्म हैं।

—विनायक दामोदर सावरकर

सृष्टि के जो नियम प्रत्यक्षनिष्ठ हैं, वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध है, अबाधित हैं, शाश्वत और सनातन धर्म प्रतीत होते हैं, वस्तुतः वे ही सनातन धर्म है।

—विनायक दामोदर सावरकर

मानवीय व्यवहार धर्म सनातन नहीं रह सकते।

—विनायक दामोदर सावरकर

धर्म का निवास स्थान हृदय है, पेट नहीं।

—विनायक दामोदर सावरकर

वह (धर्म) तुम्हारे रक्त में है, बीज में है, हृदय में है, आत्मा में है और वह हिन्दू रक्त, हृदय, बीज और आत्मा का मुसलमान आदि लोगों के पानी की एक बूंद में तो क्या पूरे समुद्र में भी डूब सकना असम्भव है। जिस राम नाम के सहारे भवसागर पर पाषाण तक तैर गए। उस राम नाम के उच्चारण मात्र से यदि वह उच्चारण पश्चात्तापदग्ध अन्तःकरण का हो तो घोर पाप भस्म हो जायेंगे, मुसलमानों के एक ग्रास अन्न की फिर क्या बिसात है।

—विनायक दामोदर सावरकर

जाके मन प्रभु तुम बसौ, सो कासों डर खाय ?
सिर जावै तो जाय प्रभु ! मेरो धरम न जाय ।।

—मदनमोहन मालवीय

जो हठ राखै धरम को तेहिं राखै करतार ।

—मदनमोहन मालवीय

रक्षा होवै धरम की, बढ़ै जाति को मान ।
देश पूर्ण गौरव लहै, जय भारत संतान ।।

—मदनमोहनमालवीय

जो अपने धर्म से प्रेम करता है और सच्चे अर्थों में धार्मिक है, वह दूसरे धर्म का अनादर क्यों करेगा ? सच्चा धार्मिक और निष्ठावान् व्यक्ति द्वेषी या अपकारक कैसे हो सकता है ? वह तो जो बोलेगा सत्य ही बोलेगा करेगा तो न्याय ही करेगा। वह असत्य अन्याय का आश्रय तो ले ही नहीं सकता। धार्मिक व्यक्ति के मुकाबले में एक धार्मिक और निष्ठावान व्यक्ति सदैव ही विश्वसनीय है ।

—मदनमोहन मालवीय

जिन लोगों के बीच मनुष्य रहता हो, उनको सुखी देखकर सुखी और दुखी देखकर दुखी होना परम धर्म है ।

—मदनमोहन मालवीय

सच्चा धर्म देशभक्ति द्वारा प्राप्त है ।

—मदनमोहन मालवीय

धर्म यह है कि प्राणी को प्राणी के साथ सहानुभूति हो, एक दूसरे को अच्छी अवस्था में देखकर प्रसन्न हों औरगिरी हुई अवस्था में सहायता दें ।

—मदनमोहन मालवीय

आज आनन्द प्राप्ति के साधन तो बढ़ गए हैं पर आनन्द नहीं बढ़ा है। आनन्द दिलाने वाला एक अनिवार्य कारक लुप्त है और वह कारक है धर्म ।

—कन्हैयालाल मणिकलाल मुंशी

धर्म का मूल सिद्धांत है मानवीय आत्मा के गौरव को प्राप्त करना, जो भगवान् का निवास स्थान है। सबधर्मों का सर्वस्वीकृत मूल सिद्धान्त यह ज्ञान ही है कि परमात्मा प्रत्येक जीवित प्राणी के हृदय में निवास करता है।

—डॉ० राधाकृष्णन्

धर्म से बड़ी शक्ति मैं नहीं जानता। पर जीवन से कट कर जब वह पन्थ और मतवाद का रूप धरता है तब वही निर्वीर्यता का बहाना और पाखण्ड का गढ़ बन जाता है।

—जैनेन्द्रकुमार (प्रस्तुत प्रश्न)

धर्म के नाम पर क्या जड़ता फैलती नहीं देखी जाती? पर वह तभी होता है जब धर्म को वाद अथवा पंथ बना लिया जाता है।

—जैनेन्द्रकुमार (प्रस्तुत प्रश्न)

यह तो आसानी से कहा जा सकता है कि धर्म प्रवर्तकों ने जो धर्म चलाया, अनुयायियों ने आचरण तदनुकूल नहीं किया। उन्होंने धर्म को सम्प्रदाय के लिए एक नारा ही मान लिया।

—जैनेन्द्रकुमार (प्रस्तुत प्रश्न)

दुनिया का धर्म तात्त्विक तो नहीं हो सकता। उसे तो तात्कालिक होना पड़ता है। इससे शास्त्रों की सीधी उपदेश की बातें उसके लिए असंगत होती हैं। इस तत्काल धर्म का अलग ही शास्त्र होता है।

—जैनेन्द्रकुमार (पूर्वोदय)

क्या कामना का होम ही धर्म नहीं है।

—जैनेन्द्रकुमार (जयवर्द्धन)

धर्म का सेवन नहीं हो सकता, धर्म में अपनी आहुति ही दी जा सकती है।

—जैनेन्द्रकुमार (मंथन)

अब ईमान (धर्म) उत्तर है तो सफलता दक्षिण।

—जैनेन्द्रकुमार (जैनेन्द्र कहा० भाग-२)

धर्म जो उजलाता है, हठ जो केवल जलाता है।

—जैनेन्द्रकुमार (जयवर्द्धन)

उपयोगी कर्म में अपने को भूलकर लगे रहना ही धर्म है।

—जैनेन्द्रकुमार (कल्याणी)

धर्म आवश्यक है उसी तरह जैसे मकान के लिए नींव आवश्यक होती है।

—जैनेन्द्रकुमार (इतस्ततः)

जहाँ धर्म नहीं, वहाँ विद्या, लक्ष्मी, स्वास्थ्य आदि का भी अभाव होता है। धर्म रहित स्थिति में बिल्कुल शुष्कता होती है, शून्यता होती है।

—महात्मा गांधी

जो धर्म शुद्ध अर्थ का विरोधी है वह धर्म नहीं है। जो धर्म राजनीति का विरोधी है वह धर्म नहीं है। धर्म-रहित अर्थ त्याज्य है। धर्म रहित राज्य सत्ता राक्षसी है।

—महात्मा गांधी

धर्म सचमुच बुद्धि-ग्राह्य नहीं, हृदय ग्राह्य है।

—महात्मा गांधी

भारतवर्ष का धर्म उसके पुत्रों से नहीं, पुत्रियों के प्रताप से ही स्थिर है। भारतीय देवियों ने यदि अपना धर्म छोड़ दिया होता तो देश कब का नष्ट हो चुका होता।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती

धर्म का बंधन रक्त और वीर्य के बंधन से सुदृढ़ है।

—अज्ञात

धर्म का मार्ग फूलों की सेज नहीं है। इसमें वड़े-बड़े कष्ट सहन करने पड़ते हैं।

—अज्ञात

मेरा विश्वास है कि विना धर्म का जीवन विना सिद्धांत का जीवन होता है और विना सिद्धांत का जीवन वैसा ही है जैसा कि विना पतवार का जहाज। जिस तरह बिना पतवार का जहाज मारा-मारा फिरेगा, उसी तरह धर्महीन मनुष्य भी संसार-सागर में इधर से उधर मारा-मारा फिरेगा और अपने अभीष्ट स्थान तक नहीं पहुँचेगा।

—महात्मा गांधी

धर्म तत्त्व के प्रचार का एकमात्र साधन वुद्धि है। यदि कोई नहीं समझता है, तो बुद्धि ने उसको समझाना है। फिर भी नहीं समझता तो फिर से समझाना है। बुद्धि के सिवा विचार प्रचार का दूसरा कोई शस्त्र नहीं है; क्योंकि अज्ञान को ज्ञान ही मिटा सकता है।

—स्वामी शंकराचार्य

है धर्म पहुँचना नहीं, धर्म तो जीवन भन चलने में है।
फैला कर पथ पर स्निग्ध ज्याति, दीपक समान जलने में है।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

रोटी के पीछे आटा है क्षीर-सा,
आटे के पीछे चक्की की तान है,
उसके पीछे गेहूँ है, वृष्टि है,
वर्षा के पीछे अब भी भगवान् है।

—रामधारीसिंह 'दिनकर' (नये सुभाषित)

धर्म है आज का यह और कोई नहीं,
सिर्फ इंसान है, और कोई नहीं,
तुम इसे त्राण दो प्राण दो जिन्दगी,
और कोई नहीं और कोई नहीं।

—उदयशंकर भट्ट (कणिका)

हो जिसे धर्म से प्रेम कभी वह कुत्सित कर्म करेगा क्या ?
बर्बर, कराल, दष्ट्री बनकर मारेगा और मरेगा क्या ?

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

थोथे आदर्शों में रत युग मन, बदल गई आध्यात्मिक परिभाषा।
अब न धर्म परलोक मुक्ति अर्जन, वह उन्नत भूजीवन अभिलाषा।

—सुमित्रानंदन पंत (लोकायतन)

हमें चाहिए जीवन और विचार भी।
अम्बर का सपना भी, यह संसार भी ।।

—रामधारीसिंह 'दिनकर' (नये सुभाषित)

फटक धर्मों की भूसी जीर्ण, मुक्त कर बीज स्वरूप प्रकाश,
मनुज संस्कृति में उसको नव्य संजोना हो चरितार्थ विकास।

—सुमित्रानन्दन पंत (लोकायतन)

त्रिलोक को, या निज आयु को, तथा
सभी सुखों को सब लोक-द्रव्य को,
सदैव नाशोन्मुख जान देह को
स्वधर्म-सेवा करना यथार्थ है।

—अनूप (वर्द्धमान)

मनुष्य विद्यार्चन, अर्थ-अर्जना
शरीर को शाश्वत जान के करे,
परन्तु त्यागे न कदापि भावना,
स्व-धर्म की जीवन अल्प मान के।

—अनूप (वर्द्धमान)

कोरा ईश्वरवाद करेगा क्या अहो ?
है जो प्रभु के कर्म उन्हें करते रहो।
बौद्ध और ब्राह्मण धर्म यों एक हैं,
दोनों में ही यही अभिन्न विवेक है।

—मैथिलीशरण गुप्त (मंगलघट)

सिद्ध हो चुका है तह मर्म, जय है वहीं जहाँ है धर्म।
अपना धर्म यहाँ तक ध्येय, कि है निधन भी उसमें श्रेय ।।

—मैथिलीशरण गुप्त (हिन्दू)

पशुवल नहीं चाहता धर्म, नहीं कराता वह दुष्कर्म।
लूट मार या अत्याचार, करे लुटेरों की तलवार ।।

—मैथिलीशरण गुप्त (हिन्दू)

न हो नहीं यदि धन कुछ मास, रक्खा भुज-बल का विश्वास।
सच्चा धन तो है वस धर्म, जो हिन्दू का जीवन मर्म ।।

—मैथिलीशरण गुप्त (हिन्दू)

जीवन यशस्-सम्मान धन-सन्तान सुख सब मर्म के,
मुझ को परन्तु शतांश भी लगते नहीं निज धर्म के।

—मैथिलीशरण गुप्त (जयभारत)

भिन्न भिन्न जो धर्म बने थे, वह सुधार थे बार-बार के;
एक हटा शोषक—पीछे से आया अन्य कि जीत-हार थे।

—रांगेय राघव (मेधावी)

होत सदा जेहि आड़ लै, अत्याचार अपार।
क्यों न कहैं तेहि धर्म कहँ, कोटि बार धिक्कार ।।

—रामेश्वर करुण (करुण सतसई)

वाह्य आचरण धर्म न होई। वसत मनुज मानस महूँ सोई ।।
मन ही सब कर्मन आधारा। मन संजात आचरण सारा ।।
शुद्ध-अशुद्ध होत मन जैसा। तैसिहि वाणी, कर्महू तैसा ।।

—द्वारकाप्रसाद मिश्र (कृष्णायन)

है सकल जीव को सुखी करता, रस समय पर बरस बहुत प्यारा।
है भली नीति-चाँदनी जिसकी, धर्म है चाँद वह बड़ा प्यारा।
तो न बनता सुहावना सोना, औ बड़े काम का न कहलाता।
जीव लोहा न लौहपन तजता, धर्म-पारस न जो परस पाता।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय (चुभते चौपदे)

धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं;
धर्मान्नाति दुश्चरम् ।

(धर्म से ही सारा जगत् परिगृहीत-आवेष्टित है। धर्म से अधिक अन्य कुछ दुश्चर नहीं है।)

—तैत्तिरीय आरण्यक (नारायणोपनिषद्)

धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा,
लोके धर्मिष्ठ प्रजा उपसर्पन्ति, धर्मेण पापमपनुदति,
धर्मे सर्वं प्रतिष्ठतम्, तस्माद् धर्मं परम वदन्ति ।

(धर्म में सारे जगत् का आश्रय है। जगत् में धर्मिष्ठ व्यक्ति के पास ही जनता धर्माधर्म के निर्णय के लिए जाती है। धर्म से ही पाप का नाश होता है, धर्म में ही सब कुछ प्रतिष्ठित है। अतः विद्वानों ने धर्म को ही सर्वश्रेष्ठ कहा है।)

—तैत्तिरीय आरण्यक नारायणोपनिषद्

अयं धर्मः सर्वेषां भूतानाम् मधु ।
(यह धर्म सब प्राणियों को मधु के समान प्रिय है।)

—बृहदारण्यक उपनिषद्

अनर्थेभ्यो न शक्नोति त्रातुं धर्मो निरर्थकः ।
(जो धर्म मानव की अनर्थों से रक्षा नहीं कर सकता, वह धर्म निरर्थक है।)

—वाल्मीकि (रामायण-युद्ध काण्ड)

अधर्मसंश्रितो धर्मो विनाशयति राघव !
(हे राघव ! जो धर्म अधर्म पर आधारित है, वह मानव को नष्ट कर देता है।)

— वाल्मीकि (रामायण-युद्ध काण्ड)

नहि धर्माभिरक्तानां लोक किंचन दुर्लभं ।
(धर्म में निष्ठा रखने वालों केलिए जगत् में कुछ भी दुर्लभ नहीं है।)

—बाल्मीकि (रामायण-उत्तर काण्ड)

कर्मचारी, लंपट, ठगी, अपढ़, असाधु, असंत।
बन वैठे अव धर्म के, ठेकेदार महन्त॥

—रामेश्वर करुण (करुण सतसई)

धर्मो हैनं गुप्तो गोपाय।
(जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है।)

—गोपथ ब्राह्मण

धर्ममूलाः पुनः प्रजाः।
(धर्म प्रजा का मूल है।)

—वेदव्यास (महाभारत)

बुद्धि संजननो धर्म आचारश्च सतां सदा।
(धर्म और सत्पुरुषों का आचार-व्यवहार—ये बुद्धि से ही प्रकट होते हैं, जाने जाते हैं।)

—वेदव्यास (महाभारत)

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्य मद्धे परागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तनि बोधत॥
(रागद्वेष से रहित ज्ञानी सत्पुरुषों द्वारा जो आचरित है तथा अपने निःसंदिग्ध अन्तःकरण द्वारा अनुप्रेरित है, उसी को वास्तविक धर्म जानिए।)

—मनु (मनुस्मृति)

न लिङ्गं धर्मकारणं।
(भाँति-भाँति की साम्प्रदायिक वेश-भूषा धर्म का हेतु नहीं।)

—मनु (मनुस्मृति)

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यं क्रोधो दशकं धर्म लक्षणं॥
(धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिह-निग्रह, तत्वज्ञान, आत्मज्ञान, सत्य और अक्रोध, ये दस धर्म के लक्षण हैं।)

—मनुस्मृति

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

(जो धर्म को नष्ट करता है, धर्म उसे नष्ट कर देता है, और जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है।)

—मनुस्मृति

एक एव सुहृद्धर्मो निधनेप्यनुयाति यः।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति॥

(धर्म ही मानव का एकमात्र वह मित्र है, जो मृत्यु के बाद भी उसके साथ जाता है। दूसरा सब कुछ तो देह के साथ यहाँ पर ही नष्ट हो जाता है।)

—मनुस्मृति

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः॥

(अहिंसा, सत्य, अचौर्य, पवित्रता, इन्द्रिय-निग्रह—संक्षेप में धर्म का यह स्वरूप चारों ही वर्णों के लिए मनु ने कहा है।)

—मनुस्मृति

यतो धर्मस्ततो जयः।

(जिस पक्ष में धर्म होता है, उसी पक्ष की विजय होती है।)

—वेदव्यास महाभारत

अहिंसा सत्यंस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
दानं दया दमः क्षान्तिः सर्वेषां धर्मसाधनम्॥

(अहिंसा, सत्य, अचौर्य, पवित्रता, इन्द्रिय-निग्रह, दान, दया, संयम और क्षमा—ये जाति तथा वर्ण के भेदभाव के बिना सभी के लिए धर्म के साधन हैं।)

—याज्ञवल्क्य मुनि

धम्मो व सेट्ठो जनेतस्मि, दिट्ठे चेव धम्मे अभि सम्परायं च।

(धर्म ही मानवों में श्रेष्ठ है, इस जन्म में भी, पर जन्म में भी।)

—महात्मा बुद्ध (दीघनिकाय)

यतोऽभ्युदयनिः श्रेय ससिद्धिः स धर्मः।

(जिससे लौकिक प्रगति और आध्यात्मिक विकास, मुक्ति की प्राप्ति हो, वह धर्म है।)

—वैशेषिक दर्शन

धारणाद् धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयेत प्रजाः।

(धारण करने के कारण ही धर्म 'धर्म' कहलाता है, धर्म प्रजा को धारण करता है।)

—महाभारत

भिक्खवे, कुल्लूपमो, मया धम्मो देसितो।
नित्थरणत्थाय, नो गहणत्थाय ॥

(भिक्षुओ ! मैंने बेड़े की भाँति पार जाने के लिए तुम्हें धर्म का उपदेश किया है, पकड़ रखने के लिए नहीं।)

—महात्मा बुद्ध (मज्झिमनिकाय)

राग-दोस परेतहि, नायं धम्मो सुसम्बुधो।

(जो मानव राग और द्वेष से प्रलिप्त है, उसे धर्म का जान लेना सुकर नहीं है।)

—महात्मा बुद्ध (मज्झिमनिकाय)

यन्दि ट्ठिको अयं धम्मो अकालिको, एहिपस्सिको।
ओपनयिको, पच्चतम् वेदितव्वो विञ्ञूहि ॥

(यह धर्म देखते ही देखते तत्क्षण जीते जी फल देने वाला है, बिना किसी देरी के। जिसके विषय में कहा जा सकता है कि आओ और स्वयं देख लो। जो ऊपर उठाने वाला है और जिसे प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य स्वयं प्रत्यक्ष कर सकता है।)

—महात्मा बुद्ध (संयुत्तनिकाय)

सतं च धम्मो न जरं उपेति।

(सज्जन पुरुषों का धर्म कभी पुराना नहीं होता है।)

—महात्मा बुद्ध (संयुत्तनिकाय)

सव्वदानं धम्मदानं जिनाति,
सव्वं रसं धम्मरसो जिनाति।

(धर्म का दान, सब दानों से बढ़कर है। धर्म का रस, सब रसों से बढ़ कर हैं।)

—महात्मा बुद्ध (धम्मपद)

विग्गय्ह नं विवदन्ति, जना एक गदस्सिनी।

(धर्म के केवल एक ही अंग को देखने वाले आपस में संघर्ष करते हैं, विवाद करते हैं।)

—महात्मा बुद्ध (उदान)

गाथाभिगीतं मे अभोजनेय्यं।

(धर्मोपदेश करने से प्राप्त भोजन मेरे योग्य नहीं है।)

—महात्मा बुद्ध (सुत्तनिपात)

धम्मकामो भवं होति, धम्मदेस्सी पराभवो।

(धर्म प्रेमी प्रगति को प्राप्त होता है और धर्म द्वेषी अवनति को।)

—महात्मा बुद्ध (सुत्तनिपात)

धम्मो सुचिण्णो सुखमा वहाति।

(अच्छी प्रकार से आचरित धर्म सुख देने वाला है।)

—महात्मा बुद्ध (सुत्तनिपात)

निद्दरो होति निप्पापो, धम्म पीति रसं पिवं।

(धर्म प्रीति का रसपान कर मानव निर्भय और निष्पाप हो जाता है।)

—महात्मा बुद्ध (सुत्तनिपात)

परस्स चे बंभयितेन हीनो,
न कोंचि धम्मेसु विसेसि अस्स।

(यदि दूसरों की ओर से की जाने वली अवज्ञा से कोई धर्महीन हो जाए तो फिर धर्मों में कोई भी श्रेष्ठ नहीं रहेगा।

—महात्मा बुद्ध (सुत्तनिपात)

न दुग्गतिं गच्छति धम्मचारी।
(धर्मात्मा मनुष्य दुर्गति में नहीं जाता।)

—महात्मा बुद्ध (थेरगाथा)

अलाभो धम्मिको सेय्यो, यञ्चे लाभो अधम्मिको।
(अधर्म से होने वाले लाभ की अपेक्षा धर्म से होने वाला हानि श्रेयस्कर है।)

—महात्मा बुद्ध (थेरगाथा)

मरणं धम्मिकं सेय्यो, यंचे जीवे अधम्मिकं।
(अधर्म से जीने की अपेक्षा धर्म से मरना ही श्रेयस्कर है।)

—महात्मा बुद्ध (थेरगाथा)

धम्मो हवे हतो हन्ति।
(धर्म नष्ट होने पर मनुष्य नष्ट हो जाता है।)

—महात्मा बुद्ध (जातक)

सब्बे वण्णा अधम्मट्ठा, पतन्ति निरयं अधो।
सब्बे वण्णा विसुज्झन्ति, चरित्वा धम्ममुत्तमं॥

(सभी वर्ण के लोग अधर्म का आचरण करके नरक में जाते हैं और उत्तम धर्म का आचरण करके विशुद्ध होते हैं।)

—महात्मा बुद्ध (जातक)

गामे वा अदुवा रण्णे।
नेव गामे नेव रण्णे, धम्ममायाणह।

(धर्म ग्राम में भी हो सकता है और वन में भी; क्योंकि वस्तुतः धर्म न ग्राम में कहीं होता है और न वन में, वह तो अन्तरात्मा में होता है।)

—महावीर स्वामी (आचारांग)

समियाए धम्मे आरिएहिं पवेइए।
(आर्य महापुरुषों ने समभाव में धर्म कहा है।

—महावीर स्वामी (आचारांग)

एगा अहम्म पडिबा, जं से आया परिकिलेसति।

(एक अधर्म ही ऐसी विकृति है, जिससे आत्मा क्लेश पाता है।)

— महावीर स्वामी (स्थानांग)

एगा धम्मपडिमा, जं से आया पज्जवजाए।

(एक धर्म ही ऐसा पवित्र अनुष्ठान है, जिससे आत्मा की विशुद्धि होती है।)

—महावीर स्वामी (स्थानांग)

दुविहे धम्मे-सुय धम्मे चेव चरित्त धम्मे चेव।

(धर्म के दो रूप हैं—तत्त्वज्ञान और नैतिक आचार।

—महावीर स्वामी (स्थानांग)

चत्तारि धम्मदारा—
खंती, मुत्ती, अज्जवे, मद्दवे।

(क्षमा, संतोष, सरलता और नम्रता—ये चार धर्म के द्वार हैं।)

—महावीर स्वामी (स्थानांग)

असुयाणं धम्माणं सम्मं सुणणयाए
अब्भुट्ठेयव्वं भवति।

(अभी तक नहीं सुने हुए धर्म को सुनने के लिए तत्पर रहना चाहिए।)

—महावीर स्वामी (स्थानांग)

एगे चरेज्ज धम्मं।

(भले ही कोई साथ न दे, अकेले ही सद्धर्म का आचरण करना चाहिए।)

—महावीर स्वामी (प्रश्न व्याकरण सूत्र)

विणओ वि तवो, तवोपि धम्मो।

(विनय स्वयं एक तप है और वह आभ्यंतर तप होने से श्रेष्ठ धर्म है।)

—महावीर स्वामी (प्रश्न व्याकरण सूत्र)

सुयाणं धम्माणं ओगिण्हणयाए उवधारणयाए,
अब्भुट्ठेयव्वं भवति ।

(सुने हुए धर्म को ग्रहण करने—उसपर आचरण करने को उद्यत रहना चाहिए।)

—महावीर स्वामी (स्थानांग)

धम्मो मंगल मुविक्कट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ।
देवा वितं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो ॥

(धर्म श्रेष्ठ मंगल है। अहिंसा, संयम और तप धर्म के तीन रूप हैं। जिसका मत धर्म में स्थिर है, उसे देव भी नमस्कार करते हैं।)

—महावीर स्वामी (दशवैकालिक)

धम्मे हरए बम्भे संतितित्थे,
अणाविले अत्तपसन्न लेसे ।
जहिं सिणाओ विमलो विसुद्धो,
सुसीइभूओ पजहामि दोसं ॥

(धर्म मेरा जलाशय है, ब्रह्मचर्य शांतितीर्थ है, आत्मा की प्रसन्न-लेश्या मेरा निर्मल घाट है, जहां पर आत्मा स्नान कर कर्मफल से मुक्त हो जाता है।)

—महावीर स्वामी (उत्तराध्ययन)

घणेण किं धम्मधुराहिगारे ?
(धर्म की धुरा को खींचने के लिए धन की क्या आवश्यकता है।)

—महावीर स्वामी (उत्तराध्ययन)

विन्नाणेण समागम्म, धम्म साहणमिच्छिउं ।
(विवेकज्ञान से ही धर्म के साधनों का निर्णय होता है।)

—महावीर स्वामी (उत्तराध्ययन)

धम्मो उ भाव मंगल मेत्तो सिद्ध त्ति काऊणं ।
धर्म भाव मंगल है, इसी से आत्मा को सिद्धि प्राप्त होती है।)

—आचार्य भद्रबाहु (दशवैकलिक नियुंक्ति)

पच्चयत्थं च लोगस्स, नाणाविहविगप्पणं ।

(धर्मों के वेषादि के नाना प्रकार के विकल्प जन साधारण में परिचय के लिए हैं ।)

—महावीर स्वामी (उत्तराध्ययन)

पन्ना समिक्खए धम्मं ।

(साधक की स्वयं की प्रज्ञा ही समय पर धर्म की समीक्षा कर सकती है ।)

—महावीर स्वामी (उत्तराध्ययन)

जरा मरण वेगेणं, बुज्झमाणाण पाणिणं ।
धम्मो दीवो पइट्ठा य, गई सरणमुत्तमं ।।

(वृद्धावस्था और मृत्यु के महा प्रवाह में डूबते प्राणियों के लिए धर्म ही द्वीप है, प्रतिष्ठा गति है और उत्तम शरण है ।)

—महावीर स्वामी (उत्तराध्ययन)

लोगस्स सार धम्मो, धम्मं पि य नाणसारियं विंति ।
नाणं संजम सारं संजम सारं च निव्वाणं ।।

(सृष्टि का सार धर्म है, धर्म का सार ज्ञान है, ज्ञान का सार संयम है और संयम का सार निर्वाण है ।)

—आचार्य भद्रबाहु (आचारांग निर्युक्ति)

धम्ममि जो दढमई, सो सूरो सत्तिओ य वीरो य ।
ण हु धम्मपिरुस्सा हो, पुरिसो सूरो सुबलि ओऽवि ।।

(जो मानव धर्म में दृढ़ निष्ठा रखता है वस्तुतः वही शक्तिशाली है, वही शूरवीर है। जो धर्म में उत्साहहीन है, वह वीर एवं बलवान होते हुए भी न वीर है, न शक्तिशाली है ।)

—आचार्य भद्रबाहु (आचारांग निर्युक्ति)

आदा धम्मो मुणेदव्वो ।

(धर्म आत्मस्वरूप होता है ।)

—आचार्य कुंदकुंद (प्रवचनसार)

धम्मो अत्थो कामो, भिन्ने ते पिंड़िया पडिसवत्ता ।
जिण वयणं उत्तिन्ना, असवत्ता होंति नायव्वा ॥

(धर्म, अर्थ और काम को भले ही दूसरा कोई परस्पर विरोधी मानते हों, किन्तु जिन वाणी के अनुसार तो वे कुशल अनुष्ठान में अवतरित होने के कारण परस्पर अविरोधी हैं।)

—आचार्य भद्रबाहु (दशवैकालिक निर्युक्ति)

किरिया हि णत्थि अफला, धम्मो जदि णिप्फलो परमो ।

(विश्व की कोई भी मोहात्मक क्रिया निष्फल नहीं है, एकमात्र धर्म ही निष्फल है।)

—आचार्य कुंदकुंद (प्रवचनसार)

धम्मो दया विसुद्धो ।

(जिसमें दया की पवित्रता है, वही धर्म है।)

—आचार्य कुंदकुंद (बोध पाहुड)

धम्मा धम्मा न परप्पसाय—कोपाणुवत्तिओ जम्हा ।

(धर्म और अधर्म का आधार आत्मा की अपनी परिणति ही है। दूसरों की खुशी और नाराज़गी पर उसकी व्यवस्था नहीं है।)

—विशेषावश्यक भाष्य

धम्मे अणुज्जुत्तो सीयलो, उज्जुत्तो उण्हो ।

(धर्म में उद्यमी गर्म है, उद्यमहीन ठंडा है।)

—आचारांग, चूर्णि

देशकालौ गुरुपं धर्मं कथयन्ति तीर्थंकराः ।

(तीर्थङ्कर राष्ट्र और काल के अनुरूप धर्म का उपदेश करते हैं।)

—उत्तराध्ययन, चूर्णि

सव्व सत्ताण अहिंसादिलक्खणो धम्मोपिता, रक्खणत्तातो ।

(अहिंसा, सत्य आदि धर्म सब प्राणियों का पिता है; क्योंकि वही सबका रक्षक है।)

—नन्दीसूत्र, चूर्णि

धम्मस्स मूलं विणयं वदन्ति, धम्मो य मूलं खलु सोग्गईए ।

(धर्म का मूल विनय है और धर्म सद्गति का मूल है ।)

—वृहत्कल्पभाष्य

धम्मो वत्थु सहावो ।

(वस्तु का अपना स्वभाव ही उसका धर्म है ।)

—कार्तिकेयानुप्रेक्षा

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम् ।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।।

(सावधान होकर धर्म का वास्तविक रहस्य सुनो और उसे सुनकर उसी के अनुसार आचरण करो । जो कुछ तुम अपने लिए हानिप्रद और दुःखदायी समझते हो वह दूसरों के साथ मत करो ।

—महाभारत

धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षितः ।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो, मानोधर्मो हतो वधति ।।

(मारा हुआ धर्म ही हम को मारता है और हम से रक्षा किया हुआ धर्म ही हमारी रक्षा करता है, अतः धर्म का हनन नहीं करना चाहिए, जिससे तिरस्कृत धर्म हमारा विनाश न करे ।)

—महाभारत

सत्ता से धर्म फैलाने के प्रयोग इतिहास में हुए हैं, लेकिन उनसे धर्म को हानि ही हुई है । धर्म का उद्देश्य ही सत्ता से विपरीत है ।

—विनोबा भावे

आहारनिद्राभयमैथुनं च, सामान्यमेतत् पशुभिराणाम् ।
धर्मोहि तेषामधिको विशेषः, धर्मेण हीनाः पशुभिः समाना ।।

(खाने, सोने, डरने और मैथुन के विषय में मानव और पशु परस्पर समान हैं। केवल धर्म ही मानवों में विशेष है । यदि वह भी न रहा तो फिर मानव सर्वदा पशु के समान ही है ।)

—हितोपदेश

धर्म आत्मा का विषय है जिसका प्रचार चिन्तन से, ज्ञान से, तपस्या से, अनुभव से ही होता है।

—विनोबा भावे

सत्ता के बल पर जो धर्म ग्रहण कराया जाता है वह तभी तक स्थिर रहता है जब तक तलवार आगे चमकती रहती है।

—हरिभाऊ उपाध्याय

विश्वव्यापी धर्म तो एक ही है, यद्यपि उसके सैकड़ों रूपान्तर हैं।

—जी० बी० शॉ

धर्म को रोका नहीं जा सकता, अन्तरात्मा अथवा हृदय को दबाया नहीं जा सकता। धर्म तो हृदय की वस्तु है और हृदय स्वतंत्र है, अतः पूजा और धर्म स्वतंत्र हैं।

—स्टालिन

विश्व में धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। धर्म में ही सत्य की प्रतिष्ठा है। धर्म तो मानव-समाज के लिए अफीम है।

—कार्ल मार्क्स

सच्चा धर्म तो पापों की जड़ काटकर मुक्ति की राह दर्शाता है पर झूठे धर्म में मुक्ति टकों के बल बिकती है।

—रस्किन

सच्चा धर्म हमें अपने आश्रितों का सम्मान करना सिखाता है और मानवता, निर्धनता, मुसीबत, पीड़ा एवं मृत्यु को ईश्वरीय देन जानता है।

—गेटे

धर्म होने पर जब मानव इतने नीच हैं, तो धर्म न होने पर वे क्या होंगे ?

—फ्रेंकलिन

मानव और ईश की कसौटी पर जो जीवन खरा उतरे, वही सच्चे धर्म का एकमात्र प्रमाणपत्र है।

—डॉ० जानसन

गम्भीरता, उदारता, विश्वस्तता, तत्परता तथा दयालुता का व्यवहार ही सच्चा धर्म है।

—कनफ्यूशियस

मन को निर्मल रखना ही धर्म है, शेष सब कोरे आडम्बर हैं।

—संत तिरुवल्लुवर

धर्म परमेश्वर की कल्पना कर मनुष्य को दुर्बल बना देता है, उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न नहीं होने देता और उसकी स्वतंत्रता का अपहरण करता है।

—आचार्य नरेन्द्रदेव (राष्ट्रीयता और समाजवाद)

मानव की परिपूर्णता में धर्म बाधक है परलोक की सुन्दर कल्पना कर धर्म अपनी आज की जिम्मेदारियों से बरी हो जाता है। धर्म आज रूढ़ियों और स्थिर स्वार्थों का समर्थक है।

—आचार्य नरेन्द्रदेव (राष्ट्रीयता और समाजवाद)

जितने ही धर्म हैं, सब के सब ऊँचे हैं। धर्म में कसर नहीं है। कसर है तो उसके अनुयायियों में।

—महात्मा गांधी

आतिथ्य परम धर्म है।

—जयशंकर प्रसाद (अजातशत्रु)

केवल काषाय धारण कर लेने से ही धर्म पर एकाधिकार नहीं हो जाता—यह तो चित्त शुद्धि से मिलता है।

—जयशंकर प्रसाद (अजातशत्रु)

धर्म और संस्कृति निराशा की सृष्टि है।

—जयशंकर प्रसाद (तितली)

धर्म कभी धन के लिए न आचरित हो, वह श्रेय के लिए हो, प्रकृति के कल्याण के लिए हो और धर्म के लिए हो।

—जयशंकर प्रसाद (जन्मेजय का नागयज्ञ)

धर्म मानवीय स्वभाव पर शासन करता है।

—जयशंकर प्रसाद (कंकाल)

धरती

धरती बेची न जायेगी। वह मेरी है, रहेगी। और तुम सब जो भी हो, वटोही हो; आओगे रात-दो रोत रहोगे, फिर चले ही जाओगे।

—लेविटिक्स

धार्मिक (धार्मिक विश्वास)

धार्मिक विश्वास उसी सीमा तक ठीक होते हैं जहाँ तक उनमें और जीवन की घटनाओं में साम्य होता है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

अनुभव धार्मिक विश्वासों की कसौटी है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

धार्मिक को धर्मज्ञ का विरोध सहना पड़ा है।

—जैनेन्द्रकुमार (काम, प्रेम, परिवार)

वह धार्मिक नहीं जो दूसरों के धर्म के प्रति प्रेम नहीं रख सकता।

—जैनेन्द्रकुमार (मंथन)

धार्मिकता से सन्तुष्ट धार्मिक अधार्मिक है और अपने पाप से दुखी और दग्ध पापी पुण्यात्मा है।

—जैनेन्द्रकुमार (मंथन)

धीरज (दे० धैर्य, धीर)

जिसके पास धैर्य है वह जो कुछ इच्छा करता है, प्राप्त कर सकता है।

—फ्रैंकलिन

धीरज सारे आनन्दों और शक्तियों का मूल है।

—जॉन रस्किन

दुष्ट में और कलियुग में वह ईश्वर को देखने के प्रयत्न को नहीं सोचता। ऐसे धार्मिक का आचरण अपनी मूल आस्था के प्रति अनायास धर्महीन और श्रद्धाहीन हो जाता है। तब उस धर्म में से शक्ति प्रकट हो तो कैसे ?

—जैनेन्द्रकुमार (इतस्ततः)

संकट के समय धैर्य धारण करना ही मानों आधी लड़ाई जीत लेना है।

—प्लाटस

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु।
लक्ष्मीः समाविशतु, गच्छतु वा यथेष्टं॥
अथैव वा मरणमस्तु, युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

(नीतिज्ञ मनुष्य चाहे निन्दा करें या प्रशंसा करें, धन चाहे आये या बिल्कुल चला जाए, मृत्यु चाहे आज ही हो जाए या एक युग के पश्चात्, पर धैर्यवान् न्याययुक्त राह से कभी पग नहीं हटाते।

—भर्तृहरि

विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः।

(यथार्थ में धैर्यवान् तो वे ही हैं जिनका मन विकार उत्पन्न करने-वाली परिस्थिति में भी अस्थिर नहीं होता।)

—कालिदास (कुमारसम्भव)

जिसे धीरज है और जो श्रम से नहीं घबराता है, सफलता उसकी दासी है।

—अज्ञात

धैर्य संतोष की कुंजी है।

—मोहम्मद साहब

धैर्य कड़ुवा होता है पर उसका फल मीठा होता है।

—रूसो

धैर्यवान् मनःप्रसाद का सम्बल लेकर मुसीबत की नदियों को सुखपूर्वक पार कर जाते हैं। वे स्वयं को व्यथित नहीं करते।

—अज्ञात

कबिरा धीरज के धरे, हाथी मन भर खाय।
टूक एक के कारने, स्वान धरै घर जाय॥

—महात्मा कबीर (कबीर ग्रन्थावली)

अरे मन धीरज काहे न धरैं।
शुभ और असुभ करम पूरबले, रती घटै न बढ़ै॥१॥
होनहार होवै पुनि सोई, चिन्ता काहे करैं।
पसु पंछी जिव कीट पतंगा, सब की सुद्ध करैं॥२॥
गर्भवास में खबर लेतु है, बाहर क्यों बिसरैं।
मात-पिता सुत सम्पति दारा, मोह के ज्वाल जरैं॥३॥
मन तू हंसन से साहिब के, भटकत काहे फिरैं।
सतगुरु छोड़ और को ध्यावै, कारज इक न सरैं॥४॥
साधुन सेवा कर मन मेरे, कोटिन व्याधि हरैं।
कहत 'कबीर' सुनो भई साधो, सहज में जीव तरैं॥५॥

—महात्मा कबीर (कबीर शब्दावली)

भीतर जो धीरज क्या आया आसमान से,
यह जो आज फूल है फूला क्या वितान से।
समय के साथ-साथ धैर्य फल फूटता है,
धीरज की कोंपलें खिलतीं शुद्ध-ज्ञान से॥

—उदयशंकर भट्ट (कणिका)

आकाश धरा से एक रात बोला यह,
'तेरी छाती पर बहुत बोझ रहता है।'
धरती बोली, 'तू रो देता पल भर में,
सामर्थ्यवान् ही सब दुःख सुख सहता है॥'

—उदयशंकर भट्ट (कणिका)

शत्रु का लोहा गरम भले ही हो जाय पर हथौड़ा तो ठंडा रहकर ही काम दे सकता है।

—सरदार पटेल

आज जो नहीं हुआ, सिद्ध होगा कल-परसों।
जमती है क्या कहीं, हथेली पर सरसों॥

—मैथिलीशरण गुप्त (राजा-प्रजा)

गा रहा मैं गुनगुनाता सीख लो तुम,
आँधियों में झिलमिलाना सीख लो तुम।
कौंधती बिजली अँधेर घाटियों में,
बेबसी में मुसकराना सीख लो तुम॥

—रूपनारायण त्रिपाठी (वनफूल)

तिरबौ एकै बार न आवै, तिरत तिरत तिरबौ गुन पावै।
होइ साहसिक साहस राखें, वक्ता होइ वाक् के भाखे॥
या नर जा मग राखै पाऊ, गौनत पूरा होइ बटाऊ।
पहले दीच्छित विद्या दोही, अन्त गुरु कहवावै ओही॥

—नूरमुहम्मद (अनुराग बाँसुरी)

धीर होते कभी अधीर नहीं, क्यों न सिर पर विपत वितान तने।
हाथ का आँवला न है अवसर, बावला मन उतावला न बने॥

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (चुभते चौपदे)

प्रकृति का अनुसरण करो—धैर्य उसका रहस्य है।

—एमर्सन

धैर्य शौर्य का अति उत्तम, मूल्यवान् और दुष्प्राप्य अंग है।

—जान रस्किन

धूर्त—धूर्तता

हँसमुख मनुष्य ही धूर्त हो सकता है।

—शेक्सपियर

धूर्त मनुष्य और भी बुरा है जब वह साधु बनने का प्रयास करता है।

—बेकन

अपने उल्लास में कोई भी मनुष्य पाखण्डी नहीं हो सकता।

—डॉ० जानसन

धूर्तता नीचता का आवश्यक भार है।

—डॉ० जानसन

धूर्त को धोखा देने से दुगुना आनन्द आता है।

—अज्ञात

जब धूर्त चूमने का प्रयास करे तो डरना चाहिए।

—शेक्सपियर

नराणाँ नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः।
चतुष्पदी शृगालस्तु स्त्रीणां धूर्ता च मालिनी॥

(मनुष्यों में नाई, पक्षियों में कौवा, पशुओं में गीदड़ और स्त्रियों में मालिन धूर्त होती है।)

—चाणक्य

धोखा

सब धोखों में प्रथम और खराब अपने आपको धोखा देना है।

—बेली

मनुष्य दूसरे को धोखा दे सकता है; क्योंकि उससे सम्बन्ध कुछ ही समय के लिए होता है, पर अपने से, नित्य सहचरसे, जो घर का सब कोना जानता है, कब तक छिपेगा।

—जयशंकर प्रसाद (कंकाल)

हमें कोई धोखा नहीं देता। हम स्वयं अपने आपको धोखा देते हैं।

—गेटे

जो किसी के साथ धोखा करता है, वह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता वह केवल अपना ही बुरा करता है।

—अनाम

प्रयोजन रहता भी है, जाता भी अवश्य है, इन दोनों के बीच धोखा भी मिलता है और आश्रय भी प्राप्त होता है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (उजड़ी पं०)

जो मानव जान-बूझकर अपने सखा को धोखा देता है, वह अपने भगवान् को धोखा देता है।

—लेवेटर

ध्यान

ध्यान वायुयान है जो साधक को अनन्त आनन्द और अक्षय शांति के साम्राज्य में उड़ा ले जाता है।

—स्वामी शिवानन्द

ध्यान एक रहस्यमयी सीढ़ी है जो अवनि और अम्बर को मिलाती है एवं साधक को ब्रह्म के अमर लोक की ओर ले जाती है।

—स्वामी शिवानन्द

ध्यान ही वह गगन है जहाँ मगन मानव-मन के अमित बलशाली आराध्य की तस्वीर खींचने में दैवी चितेरे भी असफल होते आये हैं।

—अज्ञात

जब बुद्धि में चंचलता न हो तभी ध्यान है। मन को वशीभूत करना ही ध्यान है।

—अज्ञात

ध्यान ही मोक्ष प्राप्त करने का एकमात्र राजमार्ग है।

—स्वामी शिवानन्द

क्या तुम्हें मालूम है कि सात्विक प्रकृति का मनुष्य कैसे ध्यान करता है। वह आधी रात को अपने बिस्तर के अन्दर ध्यान करता है, ताकि लोग उसे देख न सकें।

—रामकृष्ण परमहंस

ध्येय

ध्येय जितना महान् होता है, उसका रास्ता उतना ही लम्बा और बीहड़ होता है।

—साने गुरुजी

अपने जीवन का ध्येय बनाओ और इसके बाद अपनी सारी शारीरिक और मानसिक शक्ति उसमें लगा दो।

—कार्लाइल

महान् ध्येय का मौन में ही सृजन होता है।

—साने गुरुजी

महान् ध्येय महान् मस्तिष्क की जननी है।

—इमर्सन

असफलता नहीं अपितु निकृष्ट ध्येय ही अपराध है।

—जे० आर० लावेल

हमारा ध्येय सत्य होना चाहिए, न कि सुख।

—सुकरात

ध्येयरहित मानव की समीर मदद नहीं करता।

—मानटेन

नकल

नकल चाटुकारिता का निष्कपट रूप है।

—कोल्टन

अच्छी नकल पूर्ण मौलिकता है।

— वाल्टायर

सिर्फ नकल करने से कोई मानव महत्व नहीं प्राप्त कर सकता।

—जॉनसन

मनुष्य नकल करने वाला प्राणी है और जो सबसे आगे होता है वही नेतृत्व करता है।

—शिलर

नकल साहब के खाने की जो की इक रोज होटल में।
कटा मुंह, धंस गए काँटे, दवा अब तक लगाते हैं।

—बेढब बनारसी (बेढब की बहक)

नकेल

पुरुषों की नकेल स्त्रियों के हाथ में है।

—प्रेमचन्द

नगर

नगर—मुँह सूख जाने पर कोई देखता नहीं; मुंह भारी होने पर भी कोई लक्ष्य नहीं करता। यहाँ आप ही अपने आपको देखना पड़ता है। यहाँ भिक्षा भी मिल जाती है। करुणा के लिए भी स्थान है और आश्रय भी मिल जाता है। किन्तु अपना प्रयास चाहिए।

—शरच्चन्द्र (बड़ी बहन)

नगर मानव का संसार है लेकिन ग्राम ईश्वर का।

—काउपर

नगर वृद्धि को प्रोत्साहन देता है और मानव को बातूनी एवं मनोरंजक बना देता है; किन्तु वह उन्हें बनावटी बनाता है।

—एमर्सन

नजर

प्रकृति की सब से अनोखी वस्तु आँखों की नजर है। यह वाणी से भी श्रेष्ठ होती है, यह एकता का शारीरिक निशान है।

—एमर्सन

मालिक की नजर उसके दोनों हाथों की अपेक्षा अधिक काम करती है।

—फ्रैंकलिन

नजीर

नजीर सिद्धान्त को सुरक्षित रखती है।

—डिजराइली

नफरत (दे० घृणा)

नफरत नफरत से कभी कम नहीं होती, नफरत प्रेम से ही कम होती है; यही सर्वदा उसका स्वभाव रहा है।

—गौतम बुद्ध

दुश्मन के प्रति हमारी नफरत उनके आनन्द की अपेक्षा हमारे आनन्द को अधिक क्षति पहुँचाती है।

—अज्ञात

नफरत हृदय का पागलपन है।

—बायरन

नमस्कार—नमस्ते

नम इदुग्रं नम आ विवासे नमो दाधार पृथिवीमुतद्याम् ।
नमो देवेभ्यो नम ईश एषां कृतं चिदेनो नमसा विवासे। ।।

(नमस्कार सबसे बड़ी वस्तु है, अत: मैं वेदों को नमस्कार करता हूँ, देवगण भी नमस्कार के वशीभूत हैं, अत: मैं नमस्कार द्वारा किए हुए पापों का प्रायश्चित करता हूँ ।)

—ऋग्वेद

नमस्कार द्वारा जीवन कल्याण से भर उठता है, सौन्दर्य से फूल जाता है । यह नमस्कार केवल निविड़ माधुर्य ही नहीं है, प्रबल शक्ति भी है । जिस प्रकार नमस्कार अनायास यह ग्रहण कर सकता है और वहन भी, उद्धत अहंकार उस प्रकार नहीं कर सकता ।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (नमस्तेऽस्तु)

नमस्कार द्वारा जीवन समस्त आघात, क्षति, विपद और मृत्यु सब के ऊपर अति सहज में जयी हो जाता है। इस नमस्कार द्वारा जीवन का समस्त भार क्षण में लाघवता प्राप्त करता है, पाप उसके ऊपर से क्षणिक बाढ़ की तरह चला जाता है, उसे तोड़-मरोड़कर नहीं जा सकता । इसी लिए प्रतिदिन प्रार्थना करते हैं, 'नमस्तोऽस्तु' ।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (नमस्तेऽस्तु)

'नमस्ते' प्रशंसा का एक हल्का-सा स्वरूप है अतः उत्तम प्रभाव डालने के लिए यह एक सहज उपाय है ।

—अज्ञात

'नमस्ते' स्वीकार करने से 'नमस्ते' करने वाले को संतोष हो जाता है कि आपने उसके सम्मान को स्वीकार कर लिया है ।

—अज्ञात

नम्रता (दे० दीनता)

नम्रता पत्थर को भी मोम कर देती है।

—प्रेमचन्द (निर्मला)

नम्रता का जवाब सद्व्यवहार हो सकता है, स्वार्थ और त्याग नहीं।

—प्रेमचन्द (कायाकल्प)

हम महानता के निकटतम होते हैं, जब हम नम्रता में महान् होते हैं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

जिनमें नम्रता नहीं आती, वे विद्या का पूरा सदुपयोग नहीं कर सकते। नम्रता का अर्थ है अहंभाव का आत्यन्तिक क्षय।

—महात्मा गांधी

जहाँ नम्रता से काम निकल आये वहाँ उग्रता नहीं दिखानी चाहिए

—प्रेमचन्द

सब ते लघुताई भली, लघुता ते सब होय।
जस द्वितिया को चन्द्रमा, शीश नवै सब कोय॥

—महात्मा कबीर

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैर्नवाम्बुभिर्भूरि विलम्बिनोधनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥
(फल के आने से वृक्ष झुक जाते हैं, नव वर्षा के समय मेघ झुक जाते हैं, सम्पत्ति के समय सज्जन भी नम्र होते हैं। परोपकारियों का स्वभाव ही ऐसा होता है।

—कालिदास (अभिज्ञान शाकुन्तल)

बड़ों के प्रति नम्रता कर्त्तव्य है, समव्यस्क के प्रति विनय की सूचक है, अनुजों के प्रति कुलीनता की द्योतक एवं सब के प्रति सुरक्षा है।

—सर टी० मूर

यथा नवहिं वुध विद्या पाए।

—तुलसीदास

ईश के सम्मुख दान सहस्रों पापों को भी ढक लेता है। मानव के सम्मुख नम्रता बुराइयों को छिपा लेती है।

—ग्रेंविली

नम्रता का असर दूर तक जाता है और उसमें कुछ भी खर्च नहीं होता।

—स्माइल्स

कष्ट और क्षति सहने के पश्चात् मनुष्य अधिक विनम्र और ज्ञानी होता है।

—फ्रेंकलिन

नम्रता सारे सद्गुणों का दृढ़ स्तम्भ है।

—कन्फ्यूशियस

अपनी नम्रता का गर्व करने से अधिक निन्दनीय और कुछ नहीं है।

—मारकस औरेलियस

उड़ने की अपेक्षा जब हम झुकते हैं तब विवेक के ज्यादा नजदीक होते हैं।

—वर्ड्सवर्थ

यह रहीम मानैं नहीं, दिल से नवा जो होय।
चीता चोर कमान के, नए ते अवगुन होय॥

—रहीम (रहिमन विलास)

क्यों नजर डाले पराये दोप पर, निज दिल दुखाये।
देख अन्तर-ज्योति साथी, नम्र हो मस्तक झुकाये॥

—श्रीमन्नारायण (रजनी में प्रभात का अंकुर)

मानव की लघुता भली, नहीं देव-सा मान।
लघुता में ही मनुज की, गुरुता का गुन-गान॥

—श्रीमन्नारायण (रजनी में प्रभात का अंकुर)

गर्व वश देवता दानव बन जाते हैं और नम्रता से मानव देवता।

—आगस्टाइन

अभिमान की अपेक्षा नम्रता से अधिक लाभ होता है।

—कहावत

सास ससुर गुरु मातु पितु प्रभु भयो चहै सब कोइ।
होनो दूजी ओर को, सुजन सराहिअ सोइ।।

—तुलसीदास (दोहावली)

उसका गुण-स्मरण ही अच्छा जो जन चला गया;
सबके लिए रहे हम सब में आदर और दया।

—मैथिलीशरण गुप्त (काबा और कर्बला)

फूलके से फूले न रहो कुछ दबना सीखो।
बनो न सूखे पेड़ रेंड के, नवना सीखो।।

—रामखेलावन वर्मा (चन्द्रगुप्त मौर्य)

होता है सिर को नवा, नर जग में सिरमौर।
बनता है वन्दन किए, वंदनीय सब ठौर।।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (हरिऔध सतसई)

अहं को त्याग अणु में मित्रता कर लो;
गगन को भूल जग को अंक में भर लो;
इसी में हित निहित शिखरो तुम्हारा है;
झुको, झुककर धरा की वन्दना कर लो।

—जगदीश वाजपेयी

सभी गुणों की जननी महाशुभा
विनम्रता ही अति पुष्ट नींव है,
समुच्च निर्माण विधेय हो जिसे
वही बने निम्न न अन्य मार्ग है।

—अनूप (वर्द्धमान)

यह एक इकाई सत्ता की,
बस जन्म-मरण है इसका क्रम,
तू नहीं आज तक जान सका,
क्या सत्य और क्या है विभ्रम
जीवन की गति में लय होकर,
तू सत्ता का भ्रम हर मानव !
अपना सर नीचा कर मानव !

—भगवतीचरण वर्मा (रंगों से मोह)

जितना विनम्र हो, तू कठोर ! तू उतना ही जीवन-शोभन !
बन मत गर्वोन्नत शैल-शिखर, यह श्रेयस्कर
—जो धो दे जग के श्रान्त चरण—तू बन सागर
भू-भार न बन, ओ मन मेरे, बन रत्नाकर
तू द्रवीभूत हो जा, निष्ठुर ! तज कर निज जड़ता के बंधन !

—नरेन्द्र (पलाश-वन)

नयन (दे० आँख)

नयनन में नय नाहिनै, याते नयना नाम ।

—तुलसीदास (मानस-बालकाण्ड)

लोचन उपयोगी महा हैं ध्रुवयंत्र समान ।
विचलित हो न सुपंथ से, जन-जीवन-जलयान ॥
आँखों की ही जाँच पर, करो सुहृद ! सन्तोष !
इन कसौटियों पर कसो, जन-जन के गुणदोष ॥
बचो देख भवकूप, दो-दो दृग अर्पण किए ।
पहिचानो निज रूप, प्रभु ने ये दर्पण दिये ॥

—राजाराम शुक्ल

9:125x
15268.5

जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी। नहिं लावहिं परतिय मनु डीठी।
मंगन लहहिं न जिन्ह के नाहीं। ते नर-वर थोरे जग माहीं॥

—तुलसीदास (मानस-बालकाण्ड)

देख रहे जो कुछ उसमें भी सब का मत विश्वास करो।
सुनी हुई बातें तो केवल गूँज हवा की होती हैं॥

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

आगत क्रमांक......
दिनांक......

नरक

अवसर का हाथ से निकल जाना और समय बीतने के बाद यथार्थता का ज्ञान होना ही नरक है।

—अज्ञात

काम क्रोध मद लोभ सब, नाथ नरक के पंथ।

—तुलसीदास (मानस-सुन्दरकाण्ड)

संसार में छल, प्रवंचना और हत्याओं को देखकर कभी-कभी मान ही लेना पड़ता है कि यह जगत् ही नरक है। कृतघ्नता और पाखण्ड का साम्राज्य यही है।

—जयशंकर प्रसाद

सांसारिक वैभव और सत्ता के पीछे पागल होकर जो दूसरे का बुरा चाहता है और उसका अहित करने का प्रयत्न करता है, उसका जीवन नरक बन जाता है।

—हरिभाऊ उपाध्याय

बुरे अन्तःकरण की यातना जीवित आत्मा का नरक है।

नरक में गिरनासरल है।

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी।
आगत क्रमांक......2074—बंडल......
दिनांक......

वे पुरुष जो ज्ञान की बड़ी-बड़ी बातें बताते हैं; किन्तु जिनके हृदय में दया भाव नहीं है, अवश्य नरक में जाते हैं।

—महात्मा कबीर

मन स्वेच्छा से ही स्वयं में स्वर्ग को नरक और नरक को स्वर्ग बना सकता है।

—मिल्टन

नरक ईश्वर का न्याय है, स्वर्ग उसका प्रेम है, धरा उसकी दीर्घ-कालीन पीड़ा है।

— बारोन बेसेन बर्ग

जहां मनुष्यों को मनुष्य अधिकार प्राप्त नहि।
जन जन सरल सनेह सुजन व्यवहार प्राप्त नहि।।
निर्धारित नर नारि उचित उपचार प्राप्त नहि।
कलि-मल-मूलक कलह कभी होवे समाप्त नहि।।
वह देश मनुष्यों का नहीं, प्रेतों का उपवेश है।
नित नूतन अघ उद्देशथल, भूतल नरक निवेश है।।

—श्रीधर पाठक

नरकगामी

जो पुरुष अन्य पुरुषों की जीविका नष्ट करते हैं, अन्य लोगों का घर उजाड़ते हैं, अन्य लोगों की पत्नियों का उनके पतियों से वियोग कराते हैं और मित्रों में भेदभाव उत्पन्न करते हैं, वे अवश्य नरक में जाते हैं।

—महाभारत

नारी नज वन तप करै, तप तज करै जुनार।
ए दोनों नर्कहि परै, कहि 'अनन्य' निर्धार।।

—अक्षर अनन्य (निर्धार शतक)

आरत पुकारत ही राम-राम बार बार,
लीन्हों न छँड़ाय तुम सीता अति भीति मानि।
गाय द्विजराज तिय काज न पुकार लागै,
भोगवै नरक घोर चोर को अभयदानि ।।

—आचार्य केशव (रामचन्द्रिका)

नशा

नशे में हम मैदान की तरफ दौड़ते हैं, सचेत होकर हम घर में विश्राम करते हैं।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

नशे का जोश ताकत नहीं है। ताकत वह है जो अपने बदन में हो।

—प्रेमचन्द (कायाकल्प)

नशे में हमारे मनोभाव अतिशयोक्ति पूर्ण हो जाते हैं।

—प्रेमचन्द (प्रेमाश्रम)

नशे में आदमी की देह अपने काबू में नहीं रहती, पैर कहीं पड़ता है, कहता कुछ है, जबान से निकलता कुछ है।

—प्रेमचन्द (मंत्र)

नशे में चेतना एकांगी हो जाती है, जैसे फैला हुआ पानी एक दिशा में बहकर वेगवान हो जाता है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

नशे की नींद का पूछना ही क्या ?

—प्रेमचन्द (दीक्षा)

नशे में मत्त व्यक्ति प्रकृतिस्थ व्यक्ति की अवज्ञा करता है, उसके संयम को या तो वह भ्रम समझता है या उसकी दुर्बलता।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (साहित्य में नवीनता)

नशे में क्रोध की भाँति ग्लानि का वेग भी सहज में ही उठ जाता है।

—प्रेमचन्द

नसीहत

अच्छी नसीहत मानना अपनी ही क्षमता बढ़ाना है।

—गेटे

ऐसी नसीहत न दो जो बहुत ही आकर्षक हो अपितु ऐसी दो जो अति उपयोगी हो।

—सोलन

अपने इष्ट-मित्रों को एकांत में नसीहत दो लेकिन प्रशंसा खुलेआम करो।

—राइरस

अच्छी नसीहत अमूल्य निधि है।

—मेजिनी

नसीहत हिम के सदृश है, जितनी धीरे-धीरे गिरती है उतनी ही अधिक स्थायी होती है और उतनी ही गहराई से अन्तर में प्रवेश करती है।

—कॉलरिज

विना माँगे किसी को नसीहत न दो।

—जर्मन कहावत

नहीं

रहिमन ते नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं।
उनते पहिले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं ॥

—रहीम

वह मानव जो बुराई के लिए लोभ दिखाने पर भी निश्चयपूर्वक 'नहीं' नहीं कह सकता है, सर्वनाश की राह पर है।

—जे० हॅविज

एक बार शुरु में शिक्षार्थी, ग्राहक, शिशु, पति अथवा पत्नी के मुख से 'नहीं' निकल लेने दो, तो फिर उस दुःखद 'नहीं' को 'हां' में परिवर्तित कराने हेतु देव सरीखी बुद्धिमत्ता और धैर्य की आवश्यकता है।

—डेल कारनेगी

वह मानव जिसने 'नहीं' कहना नहीं सीखा, जब तक वह जीवित रहेगा यदि दीन नहीं तो दुर्बल अवश्य रहेगा।

—ए० मैकलेरन

जब कोई पुरुष एक बार 'नहीं' कह देता है, तो फिर उसके व्यक्तित्व का सारा घमण्ड यह चाहता है कि वह 'हां' न करे।

—ग्रोवर स्ट्रीट

नागरिक

साँप !
तुम सभ्य तो हुए नहीं ;
नगर में बसना भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछें—(उत्तर दोगे ?)
तब कैसे सीखा डँसना—
विष कहाँ पाया ?

—'अज्ञेय' (इन्द्रधनुष रौंदे हुए ये)

सभ्य देश बाहर से संस्कृत,
भीतर बर्बर, आत्म पराजित,
घृणा द्वेष स्पर्धा भय पीड़ित,
काल-दंष्ट्र में रे ये अणु मृत !
इन्हें भाव दो !

—सुमित्रानन्दन पंत (वाणी)

कोई नागरिक इतना धनवान न हो कि दूसरे को खरीद सके अथवा इतना निर्धन न हो कि उसे स्वयं को बिकने के लिए बाध्य होना पड़े।

—रूसो

नाटक

किसी युवा को रंगशाला में नहीं जाना चाहिए। सिर्फ नाटक ही नहीं अपितु वह स्थान भी अपवित्र होता है।

—एलेक्जेण्डर ड्यूमा

नाटक इन्सान की किताब है।

—विलमट

नातेदारी

नाते नेह दूरी भली, लो रहीम जिय जानि।
निकट निरादर होत है, ज्योंगड़ही को पानि ।।

—रहीम

कैसा नाता-रिश्ता, बन्दे ! मुँह देखे की प्रीति यहाँ,
बस आँखों की लाज निभाना यही रही है रीति यहाँ।
पीठ फिरी तो बन्द हो गए अपनों के भी द्वार सभी,
तुम नवीन, अब तक न रंच भी समझ सके यह नीति यहाँ ।।

—बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (हम विषपायी जनम के)

नाते नेह राम के मनियत सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं।
अन्जन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ।।

—तुलसीदास (विनयपत्रिका)

नाम

गुणों से रहित नाम निरर्थक होता है।

—होमर

नाम में क्या रखा है! जिसे हम गुलाब कहते हैं, वह किसी अन्य नाम से भी वैसी सुगन्ध ही देगा।

—शेक्सपियर

रूप विशेष नाम बिनु जाने।
करत लगत न परहिं पहिचाने॥
देखियहिं रूप नाम आधीना।
रूपज्ञान नहिं नाम विहीना॥

—तुलसीदास

आदि नाम पारस अहै, मन है मैला लोह।
परसत ही कंचन भया, छूटा बंधन मोह॥

—महात्मा कबीर

आदि नाम निज मूल है, और मंत्र सब डार।
कह कबीर निज नाम बिनु, बूड़ि मुआ संसार॥

—महात्मा कबीर

जबहिं नाम हिरदे धरा, भया पाप का नास।
मानो चिनगारी आग की, परी पुरानी घास॥

—महात्मा कबीर

खोया हुआ नाम कदाचित् ही पुनः मिलता है—जब चरित्र का पतन होता है तब सब कुछ खो जाता है और जीवन का बहुमूल्य रत्न हमेशा के लिए चला जाता है।

—अज्ञात

अपना नाम सदैव अमर रखने के लिए मानव बड़े से बड़ा खतरा उठाने, धन खर्च करने, हर तरह के दुःख सहने, यहाँ तक कि मरने के लिए भी तैयार हो जाता है।

—सुकरात

नामों में देशकाल की संस्कृति का प्रतिबिम्ब रहता है।

—धीरेन्द्र वर्मा

हरेक मानव अपने नाम को सर्वोच्च स्थान देना चाहता है। अतः दूसरों को प्रभावित करने के लिए उनके नाम की प्रतिष्ठा कीजिए।

—अज्ञात

अधिक धन की अपेक्षा नेकनाम अधिक पसन्द करना चाहिए।

—कहावत

सपनेहुँ में बर्राइके, धोखेहुँ निकरे नाम।
पाके पग की पैंतरी, मेरे तन को चाम॥

—महात्मा कबीर (कबीर वचनावली)

नाम-जप

नाम जप विषय-वासना की ओर जाती हुई विचारधारा को रोकता है। यह मन को ईश्वर की ओर, अनन्त आनन्द-प्राप्ति की ओर जाने के लिए प्रेरित करता है।

—स्वामी शिवानन्द

नाम जप जन्म और मृत्यु को नष्ट कर देता है।

—स्वामी शिवानन्द

नायक

हरेक नायक आखिर में 'वीर' हो जाता है।

—एमर्सन

नारायण

नारायण परम ज्योति है, नारायण परमात्मा है, नारायण परम तत्त्व है, नारायण परम ध्याता है, नारायण परम ध्यान है और नारायण परब्रह्म है।

—नारायण उपनिषद्

बाहरी शत्रु को जय करने के लिए आन्तरिक सैन्य दल का नायक न रहने से उस दुर्दान्त सैन्य दल के हाथ मारे जाने की संभावना है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (वासना, इच्छा मंगल)

सैन्य नायक राज्यदस्यु विजित राज्य से अधिक अच्छा हो सकता है, किन्तु वह सुखपूर्ण नहीं है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (वासना, इच्छा मंगल)

नारी

नारी की चेष्टा रहती है कि जल्दी से जल्दी कोई भला घर पा जाय। समझदार पुरुष का भला इसी में होना है कि जब तक बने अविवाहित रहे।

—बर्नार्ड शॉ

नारी का संग-साथ अच्छा है। कम से कम इसलिए कि तब पुरुष में सभ्यता संस्कार ही नहीं उग चलते बल्कि विचार भावनाएँ भी जग जाती हैं और इन्हीं तत्त्वों में तो जीवन जगत् की सारी श्रेष्ठता समायी है।

—गेटे

नारी शांति की प्रतिमा है, इसे उच्च पद से नीचे गिराना केवल जंगलीपन है।

—रफोडियस

जो नारी अपने पति तथा पुत्रों को सदैव सानन्द रखती है, उसके समक्ष संसार की महारानी का वैभव भी तुच्छ है।

—गोल्ड स्मिथ

जिस समय नारी शिशु को अंक में लेकर बैठती है, उस समय की उसकी प्रेम दृष्टि कौन कुशल चित्रकार चित्रित करने में समर्थ है।

—किंगजेल

नारी वह जादूगरनी है, जिसके जादू से आदमी का धर्म और ईमान समाप्त हो जाता है।

—शरण (सोना माटी)

नारी की कीर्ति स्फटिक दर्पण के सदृश है, जो अत्यन्त उज्ज्वल एवं चमकीला होने पर भी दूसरे के एक श्वास से ही मलीन होने लगता है।

—सरवार्टेस

सुन्दर नारी की सृष्टि प्रत्येक को मुग्ध करने के लिए नहीं है। वह तो एकमात्र अपने पति को सुख देने के लिए हुई है।

—वर्क

नारी के बिना पुरुष की बाल्यावस्था असहाय है, युवावस्था सुखरहित है और वृद्धावस्था सान्त्वना देने वाले सच्चे और वफ़ादार साथी से रहित है।

—जौन

पुरुष को शिक्षित करना ऐसे व्यक्ति की रचना करना है जो अपने पीछे कुछ नहीं छोड़ जाता, लेकिन नारी को शिक्षित करने का अर्थ आने वाली पीढ़ियों का निर्माण करना है।

—लावोलाथे

ईश्वर के बाद हम सब से अधिक ऋणी नारी के हैं, पहले तो स्वयं अपने जीवन के लिए और फिर इस जीवन को जीने योग्य बनाने के लिए।

—बोबी

संसार में कुनारी से बुरी कोई बुराई और सुनारी से बढ़कर कोई अच्छाई नहीं।

—यूरी पाइडस

नारी तुम्हारी परछाई के समान है, तुम यदि उसका पीछा करो तो वह तुम से आगे ही भागेगी, पर यदि तुम उससे भागो तो वह तुम्हारा पीछा करेगी।

—चैम्सफोर्ड

नारी जिसे प्रेम करती है, केवल उसी को जानती है। संसार में आदर के पात्र और भी बहुत से गुणीजन हो सकते हैं, नारियों के शासन में यह नहीं लिखा।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

जो पिता की भली बेटी नहीं, वह नारी किसी की भली पत्नी भी शायद ही बन सके।

—फ्रेंकलिन

जब मैं किसी नारी को देखता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि ईश्वर के सामने खड़ा हूँ।

—एलेक्जेण्डर स्मिथ

नर और नारी कैंची के दो भागों के समान पारस्परिक जीवन को पूरा करते हैं।

—फ्रेंकलिन

कौन सी ऊँचाई है जहाँ नारी चढ़ नहीं सकती। कौन-सा ऐसा स्थान है जहाँ वह पहुँची नहीं। हजारों अपराध करो, वह क्षमा कर देती है। जब किसी बात पर अड़ जाये तो संसार की कोई भी शक्ति रोक नहीं सकती।

—कार्लेटन

समाज के आचरण को बनाना, घर का प्रबन्ध करना तथा कोमलता, प्रेम और सहनशीलता से जीवन की विषम यात्रा को सरल और सुखद बनाना नारी का कार्य है।

—ग्रियर्सन

प्रेम किस प्रकार किया जाता है, इसे केवल नारियाँ ही जानती हैं।

—मोपासाँ

नारी अविकसित पुरुष नहीं, उसे पुरुष के समान बनाना मधुर प्रेम की हत्या करना है। उसके अस्तित्व को नष्ट-भ्रष्ट करना है।

—टेनिसन

विश्व में, कोई वस्तु इतनी मनोहर नहीं, जितनी कि सुशील और सुन्दर नारी ।

—हन्ट

नारी यौवन काल में गृह देवी, मध्यकाल में सच्चा साथी और वृद्धावस्था में परिचारिका का काम देती है ।

—बेकन

अपना घर और अच्छी नारी स्वर्ण और मुक्ता के समान है ।

—गेटे

जिस प्रकार तारे गगन के भूषण हैं, उसी प्रकार नारियाँ भी विश्व के आभूषण हैं । वे साफ चमकते हुए पार्थिव नक्षत्र हैं, जिनमें पुरुष के भाग्य का निपटारा होता है ।

—हारग्रेव

नारी की आँखों में कानून से भी अधिक शक्ति होती है । और किसी भी तर्क से अधिक उनके अश्रु प्रभावशाली होते हैं ।

—सैविली

नारी के लिए यही अच्छा है कि वह जिस पुरुष को चाहती है, उससे विवाह करने की अपेक्षा उस पुरुष से विवाह करे जो उसे चाहता है ।

—रोचफ्कोल्ड

एक अच्छी नारी से विवाह जीवन के तूफान में बन्दरगाह की तरह है, कुनारी से विवाह बन्दरगाह में तूफान की तरह है ।

—सेन

पुरुष नारियों के विषय में मुँह आया कहते हैं, नारियाँ पुरुषों के विषय में मन आया करती हैं ।

—देसीगूर

पुरुष के पास केवल इच्छाएँ हैं, नारियों के पास उन्हें पूरा करने की युक्तियाँ भी ।

—होम्स

जो नारी पतिव्रता होगी उसे अपने पर गर्व होगा।

—बेकन

नारियाँ इसलिए अधिकार चाहती हैं कि उनका सदुपयोग करें और पुरुषों को उनका दुरुपयोग करने से रोकें।

—प्रेमचन्द (गोदान)

जो आदर्श नारी हो सकती है, वही आदर्श पत्नी भी हो सकती है। औरत के हाथ में बड़ी बरक्कत होती है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

नारी को अ-नारी अंकित करना निरा पागलपन है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (साहित्य में नवीनता)

नारी खिलवाड़ की वस्तु नहीं है और न ही इसकी उपेक्षा की जा सकती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (आँख की किरकिरी)

जब नारी की एक बार की भूल, चाहे वह किसी कारण हो, हिन्दू समाज में किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं रहने देती, तब वही भूल पुरुष जीवन में पाप रूप से प्रतिष्ठित हो जाने पर समाज के लिए एक सामान्य बात क्यों बनी रहती है? एक-सा अपराध होने पर नारी और पुरुष का दंड एक-सा क्यों नहीं होता?

—शरण (सोना माटी)

नारी का हृदय कोई खिलौना नहीं, जिससे चाहा खेल लिया।

—शरण (जिन्दगी की तहें)

नारी की मादकता सुरा से भी कहीं अधिक है। एक की मादकता जब चढ़ती है, तो उतरने का नाम नहीं लेती और दूसरे की मादकता कुछ क्षण में नहीं, घंटों में अवश्य उतर जाती हैं। पर हैं दोनों ही पथभ्रष्ट। कैसा ही चरित्रवान व्यक्ति क्यों न हो, एक बार फँस जाय इनके चँगुल में फिर देखो, वे उसे कहाँ ले जा पटकती है।

—शरण (जिन्दगी की तहें)

नारी जिसे सब कुछ देना चाहती है, उसके विरुद्ध होने पर प्रतिशोध भी ले सकती है।

—शरण (जिन्दगी की तहें)

नारी हर समय पुरुष की मर्यादा से खेल सकती है। यह वह आग है जिसके बीच में पड़ कर सम्मान का झुलसे बिना रहना असम्भव है। कर्त्तव्यपरायणता से इसे कदापि नहीं बुझाया जा सकता है। इसे तो प्रपंच एवं कृत्रिमता की वृष्टि ही शांत कर सकती है।

—शरण (जिन्दगी की तहें)

नारी मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति है। वह उसके अधूरे जीवन की पूरक होती है। उसे पाकर सभी अभाव स्वमेव भर जाते हैं। वह उसके अंधकारमय जीवन को आलोक देती है। यदि वह न हो तो मनुष्य का जीवन शुष्क हो जाय। उससे ऊब कर स्वयं ही आत्मघात कर ले।

—शरण (सोना माटी)

नारी को अबला कहना उसका अपमान करना है।

—महात्मा गांधी

पुरुष से नारी अधिक बुद्धिमती होती है, क्योंकि वह जानती कम है पर समझती अधिक है।

—जेम्स स्टीफन

भगवान् को अपना भग्न हृदय सौंपे तो वे उसे जोड़ देंगे, स्त्री को अपना सम्पूर्ण हृदय दें तो वह बिना चूके उसे तोड़ देगी।

—ई० पेस्टविच

निर्भीकता के साथ और बिल्कुल सच जैसा दिखता असत्य बोलने की कला में इतना निपुण कोई न हो सका जितना एक नारी।

—पोप

मुझे भय है यह कहते हुए कि नारियाँ किसी भी अन्य वस्तु की अपेक्षा क्रूरता अधिक पसन्द करती हैं—सीधी और स्पष्ट क्रूरता। उनमें आज भी आश्चर्यजनक रूप से आदिम प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं। हमने उनको सब क्षेत्रों में उठाने की कोशिश की है, लेकिन अब भी उनमें दासत्व की प्रवृत्ति ही प्रधान है। सच तो यह है कि उन्हें शासित होना ही पसन्द है।

—श्रास्कर वाइल्ड

न जानते हुए नारी के कलंक की बात पर अविश्वास करके संसार में ठगा जाना भला है; किन्तु विश्वास करके पाप का भागी होना अच्छा नहीं।

—शरच्चन्द्र (श्रीकांत)

नारी की चरम सार्थकता मातृत्व में है।

—शरच्चन्द्र (श्रीकांत, पर्व २)

नारी की छाती फटे तो फटे पर मुँह नहीं फटता।

—शरच्चन्द्र (परिणीता)

मणि-माणिक्य बहुत मूल्यवान वस्तुएँ हैं; क्योंकि वे दुष्प्राय हैं। इस हिसाब से नारी का मूल्य अधिक नहीं है, क्योंकि यह विश्व में दुष्प्राप्य नहीं है।

—शरच्चन्द्र (नारी का मूल्य)

यदि कहीं कठोर अत्याचार और अविचार के बदले में भी स्नेह और प्रेम हो सकता है, तो वह स्त्रियों में हो सकता है।

—शरच्चन्द्र (नारी का मूल्य)

जब समाज में नारी का स्थान बहुत नीचा हो जाता है, तब उसके साथ शिशुओं का स्थान भी नीचे उतर आता है।

—शरच्चन्द्र (नारी का मूल्य)

नारी सब कुछ कर सकती है, लेकिन अपनी इच्छा के विरुद्ध प्रेम नहीं कर सकती।

—सुदर्शन

नरक का द्वार कौन ? नारी।

—जगद्गुरु शंकराचार्य

नारी की उन्नति या अवनति पर ही राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्धारित है।

— अरस्तू

जहां नारी का सम्मान होता है। वहाँ देवता भी प्रसन्न रहते हैं।

—मनु

नारी चरित्र में अवस्था के साथ मातृत्व का भाव दृढ़ होता जाता है।

—प्रेमचन्द (भूत)

नारी जाति बलवान पुरुष पर जान देती है, क्योंकि वह निर्बल है इसलिए बलवान का आश्रय ढूंढ़ती है।

—प्रेमचन्द (दो सखियाँ)

नारी के लिए पुरुष-सेवा से बढ़कर और कोई शृङ्गार, कोई विलास, कोई भोग नहीं है।

—प्रेमचन्द (कायाकल्प)

नारी का मोह शरीर छूने के पहले विवेक को ही छू लेता है।

—कालिदास

पुरुष जब अपने को नारी का स्वामी समझता है तब यह नहीं जानता कि नारी के त्याग के सम्मुख वह बिल्कुल अस्तित्वहीन है।

—अज्ञात

काव्य और प्रेम· दोनों नारी हृदय की सम्पत्ति हैं। पुरुष विजय का भूखा होता है, नारी समर्पण की। पुरुष लूटना चाहता है, नारी लुट जाना।

—महादेवी वर्मा

नारी सदैव अजेय रही है।

—महादेवी वर्मा

नारी एक ऐसा पुष्प है जो घर में ही अपनी सुगन्धि फैलाता है।

—अज्ञात

दुःख और वलिदान नारी की कीमत है।

—सिद्धार्थ

जिस घर में नारी की प्रतिष्ठा है उसी में देवता वसते हैं।

—मनुस्मृति

नारी वह मधुर सरिता है जिसमें प्रवाहमान होकर मनुष्य अपनी चिन्ताओं और दुःखों से त्राण पाता है।

—शरण (सोना माटी)

नारी ही वह औषधि है जिसके द्वारा हृदय की नीरवता में से निकले हुए उच्छ्वासों को रोककर आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त की जा सकती है।

—शरण (सोना माटी)

नारी का हृदय नवनीत-सा स्निग्ध होता है। वह सहज ही पिघल जाता है; उसके हृदय में सदैव एक प्रेम का सागर उमड़ा करता है, इच्छाओं की तरंगें उसमें क्रीड़ा किया करती हैं, परिवर्तनशील फेन उनकी तलों पर तैरा करते हैं।

—शरण (सोना माटी)

नारी भी तो दिल रखती है। वह कोई खिलौना तो नहीं जो चंद चाँदी के टुकड़ों पर खरीदा जा सके। कृपा हो जाए तो किसी कंगाल को राजा वना दे और राजा को दर-दर का भिखारी। नारी के अस्तित्व को कम नहीं समझना चाहिए। पुरातन इतिहास इसका साक्षी है कि राजनैतिक दाँव पेचों में भी नारी का दखल रहा है—फिर वह उपेक्षा के भाव या हीनता को क्यों सहन करे?

—शरण (जिन्दगी की तहें)

नारी का प्यार ऐसी भँवर है, जिसमें फँसकर इंसान निकल नहीं पाता।

—शरण (जिन्दगी की तहें)

नारी सौंदर्य की एक प्रतिमा है। यों सारी प्रतिमायें जड़ होती हैं। एक नारी मात्र है जो माँसल और चेतन होती है। संगीत उसका सहचर है। इन्हीं दोनों वस्तुओं ने संसार के प्रचण्ड तूफानों को रोक रखा है।

—शरण (सोना माटी)

इस दुनियाँ में नारी से भी बड़ी कमजोरी है। हीनता निर्धनता अभिशाप बन जाती है।

—शरण (जिंदगी की नहें)

नारी जब एक बार पाप में फँस जाती है, तब वह उत्तरोत्तर उसी में लिपट जाती है, उसी के गाढ़ आलिंगन में उसे वास्तविक तृप्ति मिलने लगती है। इस प्रकार पापों की एक शृंखला बन जाती है। उसी के नए रूपों पर उसे आसक्त होना पड़ता है।

—शरण (सोना माटी)

···इसके बाद भी तो नारीकी कोई साध होती है, कोई उमंग होतीहै, कोई लालसा होती है। जब तक वह दबी रहती है, तब तक नारी को सीमा का ध्यान रहता है, वह कानून को मान्यता देती है; लेकिन जब उसके हृदय का विस्फोट होने लगता है, तब साध, उमंग और लालसा तीव्र चिंगारियाँ बनकर इधर-उधर फैल जाती हैं। तब उन्हें न कोई सीमा रोक सकती है और न कोई कानून ?

—शरण (सोना माटी)

नारी ! तेरे ह्रास में जीवन निर्झर का संगीत है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

सत्य कहहिं कवि नारि सुभाऊ। सब विधि अगम अगाध दुराऊ।।
निज प्रतिबिम्ब मुकुर गहि जाई। जानी न जाय नारि गति भाई।।

—तुलसीदास (मानस-अयोध्या कांड)

साँप बीछि को मंत्र है, माहुर झारे जात।
विकट नारि पाले परी, काटि करेजा खात।।

—महात्मा कबीर

कानून के द्वारा उसकी (नारी की) देह बाँधी जा सकती है। सीमा के द्वारा उसकी देह को बंद किया जा सकता है, पर अशारीरिक भावना का कुछ भी नहीं किया जा सकता है।

—शरण (सोना माटी)

नारी यदि कातर है तो वही एक जगह सतेज भी है। स्नेह के पक्ष में ही वह कोमल है पर उस स्नेह को लेकर ही वह अतिशय दृढ़ हो सकती है।

—जैनेन्द्रकुमार (कल्याणी)

जो ऐसा सोचता है कि नारी नरक की ओर ले जाने वाली है तो ऐसा साधु वास्तव में साधु नहीं है।

—जैनेन्द्रकुमार (साहित्य का श्रेय और प्रेय)

नारी माया ममता का बल,
वह शक्तिमयी छाया शीतल।

—जयशंकर प्रसाद (कामायनी)

वाहर चूर-चूर होकर नर बहुधा घर आता है।
नारी का मुख वहाँ निरख वह फिर नवता पाता है॥

—मैथिलीशरण गुप्त (जयभारत)

अवलाएँ हैं शक्ति रूपिणी आत्मिक बल में।
इसे सिद्ध कर दिया उन्होंने समर स्थल में॥
आधे का अधिकार उचित ही उन्हें मिला है।
मानव का पशु-भाव उन्हीं के हाथ हिला है॥
छोटों की माँ और बड़ों की वे बेटी हैं।
समवयस्कों की बहन, कहाँ किसकी चेरी हैं॥

—मैथिलीशरण गुप्त (राजा-प्रजा)

नारी नर की सहचरी, उसके धर्म की रक्षक, उसकी गृहलक्ष्मी तथा उसे देवत्व तक पहुँचाने वाली साधिका है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

नारी ! तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष-स्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।।

—जयशंकर प्रसाद (कामायनी)

नारी का मधुर सम्पर्क पुरुष को जीवन के संघर्ष में एक प्रकार का रस प्रदान करता है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

माताएँ होने के कारण स्त्रियाँ अधिक समझदार होती हैं। वे ही वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन कर सकती हैं। तभी हमारे जीवन का मौजूदा रूप बदल सकता है और तभी नये इंसान का जन्म होगा।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

जिस नारी में प्रगाढ़ स्नेह की प्रतिभा है, वह वास्तव में घर की रानी होती है।

—स्वेट मार्डन (चीयरफुलनैस)

नारी जाति का सम्मान करना चाहिए। दुखियों पर दया करनी चाहिए एवं उन जीवों को नहीं मारना चाहिए जो किसी को हानि नहीं पहुँचाते। केवल उनको मारना चाहिए जो आततायी हों। आततायी को मारना धर्म है।

—मदनमोहन मालवीय

नर के बाँटे क्या नारी की नग्न मूर्ति ही आई।
माँ, बेटी या बहिन हाय, क्या संग नहीं वह लाई।।

—मैथिलीशरण गुप्त (द्वापर)

दीन न हो गोपे, सुनो, हीन नहीं नारी कभी,
मूर्तदया-मूर्ति वह मन से, शरीर से।

—मैथिलीशरण गुप्त (यशोधरा)

अंगों पर देतीं विरल वसन,
जिससे विमुक्त निखरे यौवन।
हम तोड़ प्रणय के कटु बंधन,
मोहित करती जन-जन के मन।
हम प्रीति शिखा।

—सुमित्रानन्दन पंत (स्वर्णधूलि)

नारी का तन माँ का तन है,
जाति-बुद्धि के लिए विनिर्मित।
पुरुष प्रणय अधिकार प्रणय है,
सुख विलास के हित उत्कंठित॥

—सुमित्रानन्दन पंत (स्वर्ण किरण)

नारी लेने नहीं, लोक में देने ही आती है।
अश्रु शेष रखकर वह उनसे प्रभु-पद धो जाती है।
पर देने में विनय न होकर जहाँ गर्व होता है,
तपस्त्याग का पर्व हमारा वहीं खर्च होता है॥

—मैथिलीशरण गुप्त (जयभारत)

तुम भूल गए पुरुषत्व मोह में कुछ सत्ता है नारी की।
समरसता है सम्बन्ध बनी अधिकार और अधिकारी की॥

—जयशंकरप्रसाद (कामायनी)

नारी! तुम इस धरती पर, सुख बरसाने आई हो।
सब के जीने का सम्बल, संगीत साथ लाई हो॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

नारी ही सम्पूर्ण राष्ट्र है, धर्म कर्म संस्कृति युग चेता।
जन्मसिद्ध जन की समाज की देश जाति मानव की नेता॥
प्राण दान कर भी न चुका सकते ऋण हम इस उपकारी का।
अब अपना अभिमान नष्ट हो, रक्षित स्वाभिमान नारी का॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

करती कठोर श्रम, तोड़ती शिला,
नहिं खोदती, विपुल बोझ लादती।
रहती स्वतन्त्र, नर सी उपार्जिका,
करती स्व कर्म सब स्वाभिमान से ।।

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

राष्ट्रीय-जातीय-समाज की ये,
कन्या अरुणा रखती सचेष्टा।
जन्मी हरि; श्रीपद से अतः क्यों,
पूज्या न. ये तत्पद-तुल्य भू में ।।

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

नारी वेश-भूषा में दर्शित, नव विधि से घन चिकुर प्रसाधित।
काया स्वच्छ परिष्कृत सुरभित आनखशिख सज्जित समलंकृत ।।
कुश अतचन्द्र गृह-कुल शीलोचित, भद्र, विदग्ध, सुसंस्कृत शिक्षित।
अनुशासित, मर्यादित, नियमित दृष्टि, हास, गति, रुचि, मति, संयत।

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

हम चौराहे के पत्थर पर, सीखे दूध चढ़ाना।
घर के प्रकट देवता तनु पर अंगारे सुलगाना ।।
इसके मन व्यक्तित्व सत्य से ऊँचा बड़ा न भारी।
सबसे श्रेष्ठ, ज्येष्ठ सुन्दर है, सार सकल की नारी ।।

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

नारी नर की आलोक राशि, नारी नर की चिति का प्रसार।
दोनों का न्यायोचित समत्व, उन्मीलित करता स्वर्ग द्वार ।।

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

अन्तर की लय रस आत्मा का, प्राणों का सुख यौवन का मधु।
जीवन का संतोष, जीव का तुम चैतन्य, लोक मंगल विधु ।।

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

तनया परिणय-योग्य हुई, अब घर वर उचित अपेक्षित।
उच्च वंश के बात न करते, जाल बिछाते कुत्सित॥
जीर्ण वृद्ध धन से, छल-बल से ब्याह ले गया दुहिता।
वह अयुक्त-पतिका चिर रोती जग ताली दे हँसता॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

कोमल, करुणोन्मुख नव शिशु को कैसे क्या दुलराए।
भोली मति, विस्मित दुहिता को क्या कहकर समझाए॥
गेह चलो! घर किधर हमारा? पिता कहाँ? बोलो माँ।
मूँदने नयन मौन रह जाती, ज्यों पत्थर की प्रतिमा॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

सुना के कहानी, कथा बालकों को,
सजाती नये उच्च संस्कार धी में।
सदाचार के पाठ देती सचेष्ट,
स्व आचार से त्याग सौजन्य द्वारा॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

यह कविता की विषय, गेय कवियों की, काव्य सुधा धन, कवि यश।
आज स्वयं कवि बनी, धरा की अमर गायिका, गीतकार चिर॥
कोमल, मधुर, सरस छंदों में गूँथ रही निज प्राण भाव-मन।
कविता करते हुई स्वयं यह 'कविता' कला साधना रसनिधि॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

उठ पड़े जिस ओर पग वह सब अनूप अनन्त,
जहाँ पड़ती दृष्टि विलसित वहीं चैत्य वसन्त।
इंगित जिधर प्लावित उधर ही मुखर रस की धार
बुरकता है रंग सब पर यह किशोर उभार॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

सुमन मूक सौन्दर्य और नारियाँ सवाक् सुमन हैं।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

सत्य, धैर्य, सुख, जो इसमें है वह न अन्य के पास।
धर्म इसी के मन का प्रहरी, कर्म इसी की श्वास॥
श्रेय प्रेय की मूर्ति ध्येय की यह आत्मा की ज्ञेय।
महा शक्ति ज्योति विभूति यह नारी सदा अजेय॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

निज वर निर्वाचन स्वतन्त्र चिर, स्वयम्बरा-स्वच्छन्द श्रेष्ठ निधि,
धीर पुरुष की धीर प्रणयिनी जिसे बनाते वृद्ध हुआ विधि।
देख पुरुष छाया प्रांगण में जिसकी लज्जा से मत पलकें,
कभी मिलाकर आँख समर में भय से रिपु की छाती धड़कें॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

नाना कलाएँ लिपि, शिल्प, शास्त्र,
विद्या अनेकों रस ग्रन्थ सीखे।
कैसे करे सद्उपयोग जो हों
सन्तोष एव स्व प्रकाश भू में॥
उत्साहपूर्वक कर लोक-सेवा;
सौम्या सदाचारमयी सुशीला।
पाती समादर स्व स्वभाव द्वारा,
माँ के यहाँ, जा पति के यहाँ भी॥

—अतुलकृष्ण गोस्वामी (नारी)

कदे न सौभै सुन्दरी, सनकादिक के साथि।
जब तक कलंक लगाइसी, काली हाँडि हाथि॥

—गोरखनाथ (गोरखबानी)

रूपसी नारी प्रकृति का चित्र है सबसे मनोहर।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

नारी के भीतर असीम जो एक और नारी है,
सोचा है, उसकी रक्षा पुरुषों में कौन करेगा ?

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

कई लोग नारी-समाज की निन्दा करते रहते हैं।
मैं कहता हूँ यह निन्दा है किसी एक ही नारी की ।।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

सब देते गालियाँ, बताते औरत बला बुरी है,
मुर्दों की है प्लेग भयानक, विष में बुझी छुरी है।
और कहा करते, "फितूर, झगड़ा, फसाद, खुरेजी,
दुनिया पर सारी मुसीबतें, इसी प्लेग ने भेजीं।"
मैं कहता हूँ, अगर किया करतीं ये. तुम्हें तबाह,
दौड़-दौड़कर इन प्लेगों से क्यों करते हो ब्याह ।।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

जन्म लेती कोख से गतिप्रिय पुरुष की पीढ़ियाँ।
ऊर्ध्व गति में वह पुरुष के हित बनाती सीढ़ियाँ ।।

—नरेन्द्र (अग्निशस्य)

नारी क्रिया नहीं, वह केवल क्षमा, शांति, करुणा है।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

पगली ! कौन व्यथा है, जिसको नारी नहीं सहेगी।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

हो गया मदिर दृगों को देख, सिंह विजयी बर्बर लाचार।
रूप के एक तन्तु में नारि, गया बँध मत्त गयन्द कुमार ।।
एक इंगित पर दौड़े शूर कनक मृग पर होकर हत-ज्ञान।
हुई ऋषियों के तप का मोल तुम्हारी एक मधुर मुस्कान ।।

—रामधारीसिंह 'दिनकर' (चक्रवाल)

तुम पुरुष के तुल्य हो तो आत्म गुण को,
छोड़ क्यों इतना त्वचा को प्यार करती हो ?
मानती नर को नहीं यदि श्रेष्ठ निज से,
तो रिझाने को किसे शृंगार करती हो ?

—रामधारीसिंह 'दिनकर' (नये सुभाषित)

नारी जब देखती पुरुष को इच्छा-भरे नयन से,
मन में किसी कान्त कवि को भी जन्म दिया करती है।

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

मन कहता है भूतल पर,
सकल सुखों की नारी है निधि।
इस संसृति के संचालन को,
नारी रचकर धन्य हुआ विधि।
किन्तु वहीं कोई कहता है,
नारी है इस जग का बन्धन।
जीव ब्रह्म के बीच आवरण,
विरचा है विधि ने नारी-तन॥

—रामनरेश त्रिपाठी (स्वप्न)

नारी के कारण जग में।
यदि हो पति अपयश का भाजन॥
तो सचमुच है घोर पाप का।
फल-स्वरूप यह नारी का तन॥
है धिक्कार योग्य नारी का।
हास्य कटाक्ष वचन वह यौवन॥
बनता है जिसके प्रभाव से।
पुरुष पतित अपकीर्ति निकेतन॥

—रामनरेश त्रिपाठी (स्वप्न)

उर के कोमलतर प्यार से, आँखियों के करुणा-भार से।
युग के कठ-प्रस्तर चित्त को, तिल-तिल भी पिघलाती रहो॥
तुम मृदु-मृदु मुसकाती रहो।

—डॉ० देवराज (धरती और स्वर्ग)

पातक जदपि नाथ जग नाना। अवल वध सम पाप न आना॥

—द्वारकाप्रसाद मिश्र (कृष्णायन)

निष्फल कबहुँ न होत खल ! कुल कान्ता अपमान।
उपहृत तिनके अश्रु संग, प्रलय पयोधि महान ।।

—द्वारकाप्रसाद मिश्र (कृष्णायन)

काल कनक अरु कामिनी, परिहरि इनका अंग।
'दादू' सब जग जलि मुवा, ज्यौं दीपक ज्योति पतंग ।।

—दादू दयाल (दादू संत सुधासार)

नारी बिन नर मौन खड़ा है,
नर बिन जीवन बहुत कड़ा है,
एक पंख के साथ, कहो कब,
विहग भला उड़ सका गगन में।
कहते नारी जग में माया,
मैं कहता हूँ शीतल छाया,
जीवन के मध्याह्न काल में
हम सोते ले नींद नयन में।

—देवराज दिनेश (अन्तर्गीत)

सच है नारी कर सकती है विधि विधान के भी प्रतिकूल,
सच है प्रमदा भर सकती है, सुमन राशि में अगणित शूल,
बिजली-सी वह गिर सकती है घन के सजल हृदय को त्याग।
आग लगा सकती पानी में भर सकती जग में अनुराग,
हो सकती वह शक्ति सृष्टि की, हो सकती विनाश का मूल,
दृढ़ व्रत कर बन अचल हिमाचल, हो सकती इसके प्रतिकूल।

—गुरुभक्त सिंह (विक्रमादित्य)

तू फिर भी समझ न पाया है हृदय अभी नारी का।
उस पर न विजय पा सकता छल बल अत्याचारी का ।।
इस कोमल तन के भीतर है हृदय कोट का मंडल।
जिसमें न कभी घुस पाये हैं विश्व लुटेरों के दल ।।

—गुरुभक्त सिंह (नूरजहाँ)

नारी के मन का रहस्य मैं अब तक समझ न पाया।
विद्युत-धारा सी अदृश्य है प्रिया-प्रेम की माया।।
—गुरुभक्त सिंह (नूरजहाँ)

नारी तेरा नारी होना ही जग में है पातक भारी।
क्यों न ईश ने सिरजी केवल नर को लेकर दुनियाँ सारी।।
—शरणबिहारी गोस्वामी (पाषाणी)

नारि न तजहिं मरे भरतारहिं। ता संग सहर्षि धनंजय झारहिं।।
—आचार्य केशव (रामचन्द्रिका)

जहाँ भामिनी भोग तहँ, बिन भामिनि कहँ भोग।
भामिनी छूटे जग छूटै, जग छूटे सुख भोग।।
—आचार्य केशव (रामचन्द्रिका)

क्या रोना आता है—
लख समाज का सस्ता नारीपन?
रोना हो तो रो लो;
पर, न बनाओ अम्ल प्रेम-पय को।
—बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (हम विषपायी जनम के)

जो चाटुकारिता की सीमा में तुमको
आबद्ध रखे, ठुकरा दो नर की माया।
युग-युग की प्रेरक शक्ति, उठो फिर नारी!
देखो जग के आँगन में नवयुग आया।
—जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' (भूमि की अनुभूति)

ओछी मति युवतीन की, कहैं विवेक भुलाय।
दशरथ रानी के वचन, बन पठए रघुराय।।
—वृन्द (वृन्द सतसई)

नारी नागिनि बाघिनी, ना कीजै विश्वास।
जो वाकी संगत करै, अन्त जु होय विनास।।
—व्यास (व्यास वाणी)

कष्ट तो नारी का ही भाग, बना है नर उसके हित नाग।

—शरणबिहारी गोस्वामी (पाषाणी)

जे स्याने ह्वै जगत मैं, त्रिय को करत पियार।
ताहि महा जड़ समुझियै, चित भीतर निरधार॥

—गुरु गोबिन्दसिंह (दशम ग्रंथ)

पूरन सकल विलास रस, सरस पुत्र फल दान।
अन्त होइ सहगामिनी, नेह नारि को मान॥

—चंद बरदाई

नारी का उर ही नारी की व्यथा जान सकता है माँ।
नर का उर नारी उर की क्या कथा जान सकता है माँ॥

—श्यामनारायण पाण्डेय (जौहर)

विधि की सर्वोत्कृष्ट सृष्टि पुरुषत्व यहाँ है।
उसी सृष्टि पर पूर्ण विजय नारीत्व रहा है॥
अबला ही तुम किन्तु विषद में बल हो तुम ही।
विश्व मरुस्थल है यह इसमें जल हो तुम ही॥

—ताराचंद हारीत (दमयन्ती)

महिला मंडल को केवल, नेता बनने की झक है।
नहीं वीर माता या पत्नी, सीखा यही सबक है॥
जहाँ बीस से पार हुई मुख सुख हुआ मुनक्का।
इस जग की गति देख रह गया मैं पूरा भौंचक्का॥

—बेढब बनारसी (बेढब की बानी)

घृतकुम्भसमा नारी तप्तांगारसमः पुमान्।
तस्माद्घृतं च वह्निं च नैकत्र स्थापयेद् बुधः॥

(नारी घी का कुप्पा है और पुरुष जलता हुआ अंगार। दोनों के संयोग से ज्वाला प्रज्ज्वलित हो उठती है। अतः घी और अग्नि को कभी भी बुद्धिमान पुरुष इकट्ठा न रखे।)

—अज्ञात

नारी निन्दा मत करो नारी नर की खान।
नारी तें नर होत हैं, ध्रुव प्रह्लाद समान।।

—अज्ञात

नारी केवल माँस पिंड की संज्ञा नहीं है। आदिम काल से आज तक विकास पथ पर पुरुष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सरल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर, मानवी ने जिस व्यक्तित्वं, चेतना और हृदय का विकास किया है उसी का पर्याय नारी है।

—महादेवी वर्मा (दीपशिखा)

न पिता नात्मजो नात्मा न माता न सखीजनः।
इह प्रेम च नारीणां पतिरेको गतिः सदा।।

(नारी के लिए इस लोक और परलोक में एकमात्र पति ही सदा आश्रय देने वाला है। पिता, पुत्र, माता, सखियाँ और अपनी यह आत्मा भी उसकी सच्ची सहायक नहीं है।)

—वाल्मीकि रामायण

मानव की दृष्टि होती है और नारी की दिव्य-दृष्टि।

—विक्टर ह्यूगो

नारी देखने की वस्तु है, सुनने की नहीं।

—सफोक्लीज

नारी के जीवन का संतोष ही स्वर्ण श्री का प्रतीक है।

—डॉ० रामकुमार वर्मा

नारी की करुणा अंतर्जगत का उच्चतम विकास है, जिसके बल पर समस्त सदाचार ठहरे हुए हैं।

—जयशंकर प्रसाद (अज्ञातशत्रु)

नाश

नासतो विद्यतेभावो नाभावो विद्यते सतः।
(असत् का अस्तित्व नहीं है और सत् का नाश नहीं है।)

—श्रीकृष्ण (भगवद्गीता)

नरपति नसत कुमंत्र सों, साधु कुसंगति पाय।
विनसत सुत अति प्यार सों, द्विजविन पढ़े नसाय॥

—विदुर

नाशवान्

अन्तवत् इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।
(नित्य रहने वाले देही की यह देह नाशवान् कही गई है।)

—श्रीकृष्ण (भगवद्गीता)

नास्तिक

नास्तिको वेद निन्दकः।
(नास्तिक वह है जो वेदों की निन्दा करता है।)

—अज्ञात

वह नास्तिक है जो अपने आप में विश्वास नहीं रखता।

—स्वामी विवेकानन्द

सगुण जब आपदा में पड़ जायं और जीत में दुर्गणों की जीत होने लगे तो यह स्थिति मानव को नास्तिक बना देती है।

—ड्राइडेन

नास्तिकता

निन्दा से बचने का अचूक एवं शीघ्र इलाज स्वयं को सुधार लेना ही है।

—डिमास्थनीज

ईश्वर ने सब लोगों को अलग-अलग बनाया है। वे अलग-अलग सोचते और विचार करते हैं। अतः उनकी कल्पना को झूठा बनाकर उन पर श्रद्धा करना, नास्तिकता से अधिक और कुछ नहीं है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (गोरा)

जब धरती के कष्ट बहुत बढ़ जाते हैं, नास्तिकता का राज्य होने लगता है और लोग अपने बनाने वाले को भूल जाते हैं, तो धरती के अंतर से एक पुकार उठती है जो सब प्रकार के व्यवधानों को चीरती हुई अपने लक्ष्य तक जा पहुँचती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

निन्दा-निन्दक

संसार की निन्दा, अविचार तथा दुःख को, कष्ट को जो अबाध, असंकोच ग्रहण कर सकते हैं, वे केवल बलिष्ठ ही नहीं किन्तु निर्मल भी हैं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (दुःख)

झूठ बोलना पाप है और झूठी निन्दा करना और भी बड़ा पाप है, स्वजाति की निन्दा से बढ़कर कोई दूसरा पाप नहीं है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (गोरा)

निंदक नियरे राखिए, निर्मल आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना निर्मल करै सुभाय॥

—महात्मा कबीर

दोष पराये देख कर, चलत हंसत हंसत।
अपने याद न आवई, जिनका आदि न अंत॥

—महात्मा कबीर

हरेक की निन्दा सुन लो; लेकिन अपना फैसला गोपनीय रखो।

—शेक्सपियर

हमें धर्म का विचार हो या न हो, किन्तु निन्दा का भय अवश्य होता है।

—सुदर्शन

जो मानव अपनी निन्दा सह लेता है उसने सारे जगत् पर विजय प्राप्त कर ली।

—वेदव्यास

फूलों से है वन भरा, सूअर टोहत नन्द ।
गुण में अवगुण लाजते, जो नर है मतिमंद ।।

—मेलाराम (शिक्षासहस्री)

मिले सभी में दोष, एक ईश निर्दोष है ।
अपना जिन्हें न होश, दोष लगाते और को ।।

—मेलाराम (शिक्षासहस्री)

निन्दा-सम पातक नहीं, नहीं सत्य सम धर्म ।
लज्जा सम भूषण नहीं, नहीं फ़र्ज सम कर्म ।।

—शिवदुलारे त्रिपाठी 'नूतन'

न वस्तु निन्दा-सम शीघ्र गामिनी,
तथैव ऐसी सरला न अन्य है।
प्रसार होता इससा न अन्य का,
न व्याप्ति होती पर-वस्तु की यहाँ।

—अनूप (वर्द्धमान)

स-गर्व निन्दा करती प्रहार तो
न पुण्यवता बचती कदापि है,
न दुग्ध-सा श्वेत-चरित्र जीव भी
चरित्र में है अपवाद से बचा।

—अनूप (वर्द्धमान)

निन्दक मारिए त्रास न कीजै ।
यहै धर्म नित प्रति स्तुति गावै सन्तन को सुख दीजै ।।

—परमानन्द सागर

संत की बातें बहुत कर सत्य होती हैं,
एक का तो साक्ष्य किंचित् हम स्वयं भरते।
उन्हें भी निन्दा-श्रवण में रस उपजता है,
जो किसी की भी स्वयं निन्दा नहीं करते।

—रामधारीसिंह 'दिनकर' (नये सुभाषित)

य एवं विद्वांसमपवदति स एव पापीयान् भवति।
(जो विद्वानों की निन्दा करता है, वह पापी है।)

—शाङ्ख्यायन आरण्यक

परीवादात् खरो भवति श्वा वै भवति निन्दकः।
(गुरुजनों का परिवाद करने वाला मरकर गधा होता है और निन्दा करने वाला श्वान।)

—मनुस्मृति

न दुरुक्ताय स्पृहयेत्।
(कभी किसी की निन्दा नहीं करनी चाहिए।

—ऋग्वेद

निन्दितारो निन्द्यासो भवन्तु।
(निन्दक आखिर स्वयं ही निन्दित हो जाते हैं।)

—ऋग्वेद

'दादू' निंदक बपुरा जिनी मरै, पर उपगारी सोय।
हम कूँ करता ऊजला, आपण मैला होइ॥

—दादूदयाल (संत वाणी)

औरन जो कहत है, तो सों दोस सुनाय।
वह और न सों कहहिगो, दोस तिहारहु जाय॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

निग्रह

शरीर को रोके बिना मन पर अंकुश आता ही नहीं। परन्तु शरीर के अंकुश के साथ-साथ मन पर अंकुश रखने का प्रयत्न होना ही चाहिए।

—महात्मा गांधी

निद्रा

सोता साध जगाइए, करै नाम का जाप।
यह तीनों सोते भले साकत सिंह औ साँप॥

—महात्मा कबीर

ब्रह्मचर्यरर्ग्राम्यसुखनिस्पृहचेतसः।
निद्रा संतोषतृप्तस्य स्वकालं नातिवर्तते॥

(जो मनाव सदाचारी है, विषय-भोग से निस्पृह है और संतोष से तृप्त है, उसे समय पर निद्रा आए विना नहीं रहती।)

—अज्ञात

निद्रा भी कैसी वस्तु है। घोर दुःख के समय भी मनुष्य को यही सुख देती हैं।

—जयशंकर प्रसाद (छाया)

निद्रा केवल मन या मिथ्या अहं को आती है।

—स्वामी रामतीर्थ

अर्द्ध रात्रि के पूर्व की एक घंटे की निद्रा उसके बाद की तीन घंटे की निद्रा के समान है।

—जार्ज हर्बर्ट

निद्रा तुम्हारे मिथ्या अहं, माया, स्वप्न, भ्रम का एक रूप है।

—स्वामी रामतीर्थ

निधि

शीलं शौर्यमनालस्यं पाण्डित्यं मित्रसंग्रहः ।
अचोरहरणीयानि पञ्चैतान्यक्षयो निधिः ।।

(सुन्दर स्वभाव, शौर्य, आलस्य न करना, पण्डिताई और मित्र का संग्रह—ये पाँचों चोरों द्वारा न चुराई जाने वाली अक्षय निधि हैं ।)

—अज्ञात

निठल्ले

निठल्ले किसी काम में फँसे न रहने से वे सरकारी मिलकियत से बन जाते हैं ।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (सुभा)

शहरों में जैसे घर के सम्पर्क से बिल्कुल अलग एकआध सरकारी बगीचे का रहना जरूरी है, वैसे ही गाँवों में दो-चार निठल्ले सरकारी आदमियों का रहना अत्यन्त आवश्यक है । काम-काज में, हँसी-खेल में और जहाँ कहीं भी एक आदमी की कमी दीखी, वहीं वे चट से हाथ के पास ही मिल जाते हैं ।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (सुभा)

नियम

यह नर्तन उन्मुक्त विश्व का स्पंदन द्रुततर ।
गतिमय होता चला जा रहा अपने लय पर ।।
कभी-कभी हम वही देखते पुनरावर्तन ।
उसे मनाते नियम चल रहा जिससे जीवन ।।

—जयशंकर प्रसाद (कामायनी)

नियम मन के लिए एक दृढ़ अवलम्बन है ।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (नौका डूबी)

यदि विचार करें कि नियम का वर्जन करके नियम से ऊपर उठ जायेंगे, तो कुपित नियम के हाथ से अत्यन्त कष्ट उठाना होगा।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (शक्ति)

न देवानातिव्रतं शतात्मा च न जीवति

(देवों के नियम तोड़कर कोई सैकड़ों सिद्धियों वाला मानव भी सौ वर्ष नहीं जी सकता है।)

—ऋग्वेद

जहाँ नियमों की रक्षा नहीं की जाती वहाँ कोई भी अनर्थ अपना पैर फैला सकता है।

—अज्ञात

जिसकी बुद्धि ने विश्व के व्यापार में नियम को नहीं पहचाना, वह जीवन के हर विषय में अशक्त, अकृतार्थ तथा पराभूत है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (प्रकृति)

जहाँ पर कल्याण की बात हो वहाँ पर नियम का पालन एकदम शेष पर्यन्त मानना पड़ेगा। वहाँ कोई बन्धन, कोई जोर अस्वीकार नहीं कर सकते।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (नियम और मुक्ति)

निर्विशेष

निर्विशेष के अभिमुख होकर ही मानव की समस्त उच्च आकांक्षा, समस्त उन्नति की चेष्टा काम करती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (निर्विशेष)

नियति

नियति सम्राटों से भी प्रबल है।

—जयशंकर प्रसाद (चन्द्रगुप्त)

नियति दुस्तर समुद्र को पार कराती है, चिरकाल के अतीत को वर्तमान से क्षण भर में जोड़ देती है और अपरिचित मानवता सिंधु में से उसी एक से परिचय करा देती है, जिससे जीवन की अग्रगामिनी धारा अपना पथ निर्दिष्ट करती है।

—जयशंकर प्रसाद (तितली)

नाचती है नियति नटी-सी
कन्दुक क्रीड़ा-सी करती।
इस व्यथित विश्व आँगन में।
अपना अतृप्त मन भरती ॥

जयशंकर प्रसाद (आँसू)

निराश

सभ्यता में उस मानव के लिए जगह नहीं है, जो उदास, खिन्न और निराश है।

—स्वेड मार्डन

निराश मानव को पग-पग पर मृत्यु ही दिखाई पड़ती है। उसके जीवन में कोई वस्तु खुशी नहीं भर सकती।

—अज्ञात

निराशा

निराशा स्वर्ग की सीलन है, जैसे प्रसन्नता स्वर्ग की शांति।

—जॉन डोम

निराशा आशा के पीछे-पीछे चलती है।

—एल० ई० लैमडन

अपने अहं का विस्तार करना ही निराशा से बचने का एकमात्र उपाय है।

—टॉल्सटॉय

निराशा निर्बलता का चिन्ह है।

—स्वामी रामतीर्थ

निराशा में प्रतीक्षा अंधे की लाठी है।

—प्रेमचन्द

निराशा चारों ओर अन्धकार के रूप में दिखाई देती है।

—प्रेमचन्द

निराशा असम्भव को सम्भव बना देती है।

—प्रेमचन्द

निराशा जब चरम सीमा पर पहुँच जाती है तब हमारी जीभ बन्द हो जाती है।

—सुदर्शन

घोर निराशा मनुष्य को अनासक्त बनाकर द्रष्टा होने के लिए तैयार करती है।

—अज्ञात

निराशा बेकार बात है और आत्महत्या बिल्कुल अनुचित। आदमी चाहे कितनी भी ठोकरें खाए, यदि वह भगवान् की अभीप्सा करे तो उसकी कृपा हमेशा उसके साथ रहेगी और मुश्किलों में से उतार लेगी।

—श्री अरविन्द

मनुष्य चाहे जितना सुखी रहे,
अनन्त चाहे उसका प्रमोद हो।
समाप्त आशा उसकी हुई जभी,
ज्वरा तभी आकर कंठ दाबती।

—अनूप (वर्द्धमान)

नैराश्यं परमं सुखम्
(निराशा परम सुख है।

—अज्ञात

जिसे न कोई सुख है न शांति है,
न जीवनाशा जिसमें स-कान्ति है।
जिसे किया वेष्टित नित्य भ्रान्ति ने,
हताश प्राणी कब दीर्घ जी सका।

अनूप (वर्द्धमान)

कभी-कभी निराशा में भय भाग जाता है।

—अज्ञात

निराशा से जीवन के बहुमूल्य तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। इससे विजय के बहुत से अवसर खो जाते हैं।

—स्वेट मार्डन (चीयरफुलनैस)

रोते हैं हँसने को, साथी, सोते हम जगने को।
मरते हैं जीवन को, भाई, गिरते हम उठने को॥

—श्रीमन्नारायण (रजनी में प्रभात का अंकुर)

मत हो निराश, यह महापाप, चिर आशा तेरा भव्य पुण्य।
अब विद्यमान उर में नर के, उस पर ब्रह्म की प्रखर क्रांति;
फिर क्यों निराश हो विचलित हो, मानव ! फिरता खो अमर शांति ?

— श्रीमन्नारायण (रजनी में प्रभात का अंकुर)

निराशायाः समं पापं मानवस्य न विद्यते।
तां समूलं समुत्सार्य ह्याशावाद परो भव॥

(मानव के लिए निराशा के समान दूसरा पाप नहीं है। अतः तुम्हें उस पापरूपिणी निराशा को समूल हटाकर आशावादी बनना चाहिए।)

—अज्ञात

निराशावादिनो मंदा मोहावर्त्तोत्र दुस्तरे।
निमग्ना अवसीदन्ति पंके गावो यथावशाः॥

(प्रगति की भावना से विहीन निराशावादी लोग मोह के दुस्तर भँवर में पड़े हुए, दल-दल में फँसी विवश गोओं के समान दुःख पाते हैं।)

—अज्ञात

निराशावाद

निराशावाद डरावना राक्षस है जो हमारे नाश की ताक में बैठा रहता है।

—स्वेट मार्डन

निराशावादी ! ऐसा मानव जो सबको अपने समान गंदा समझता है और इसलिए उनसे घृणा करता है।

—बर्नार्ड शॉ

निराशावादी सदैव बुराई ही देखता है, आशावादी सदैव पहले अच्छी बात देखता है। निराशावादी चिन्ता के मारे अधमरा हो जाता है। आशावादी प्रसन्न होकर अपनी व्यथा को दूर कर ही लेता है।

—अज्ञात

निरुत्साह

निरुत्साहस्य दीनस्य शोकपर्याकुलात्मनः ।
सर्वार्थाः व्यवसीदन्ति व्यसनं चाधिगच्छन्ति ॥

(जो मनुष्य निरुत्साह, दीन और शोकाकुल रहता है, उसके सब काम बिगड़ जाते हैं और वह बहुत बड़ी मुसीबत में फँस जाता है।)

—बाल्मीकि रामायण

निर्गुण

ईश्वर के सिवा इस संसार में कोई निर्गुण नहीं है। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो अवगुणी में भी कोई न कोई गुण रहता है।

—अज्ञात

तुम ईश को निर्गुण समझते, हम सगुण भी जानते ।
हा, अब इसी से हम परस्पर शत्रुता हैं मानते ॥

—मैथिलीशरण गुप्त (भारत भारती)

निर्णय (दे० निश्चय)

अनुभव बताता है कि दृढ़ निश्चय आवश्यकता में पूरी सहायता करता है।

—शेक्सपियर

किसी वस्तु का निर्णय करने के लिए तीन तत्त्वों की आवश्यकता होती है—अनुभव, ज्ञान और व्यक्त करने की क्षमता।

—सुकरात

अपना निर्णय किसी से पूर्व न कहो।

—जान सलडेस

निर्धन (दे० दरिद्र)

इतना निर्धन जितना चर्च का चूहा।

—कहावत

इतिहास का सबसे महान् व्यक्ति निर्धन था।

—एमर्सन

जितना मिले उतना पाने के लिए खींचातानी करना निर्धन को ही शोभा दे सकता है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (आँख की किरकिरी)

निज सपनेहुँ नहिं मानहीं निर्धन जन को कोय।
धनी गोय पर घर तऊ सुर सम पूजा होय॥

—दीनदयाल गिरि

निर्धनता (दे० दरिद्रता)

निर्धनता सहने योग्य न होना लज्जाजनक बात है, लेकिन अपने कार्यों द्वारा कैसे उसे भगाना होता है, यह न जानना और भी शर्मनाक है।

—पेरीक्लीज़

दारिद्रयाद्ध्रियमेति ह्रीपरिगतः सत्त्वात्परिभ्रश्यते,
निःसत्त्वः परिभूयते परिभवान्निर्वेदमाद्यते।
निर्विण्णः शुचमेति शोकनिहतो बुद्धया परित्यज्यते।
निर्बुद्धिः क्षयमेत्यहो निर्धनता सर्वापदामास्पदम्॥

(निर्धनता से मानव को लज्जा होती है, लज्जा से पराक्रम नष्ट हो जाता है, पराक्रम न होने से अपमान होता है, अपमान होने से दुःख मिलता है, दुःख से शोक होता है, शोक से बुद्धि नष्ट हो जाती है और बुद्धि न होने से नाश हो जाता है। निर्धनता ही सब मुसीबतों का घर है।)

—हितोपदेश

निर्बल

सबल की शिकायतें सब सुनते हैं, निर्बल की फरियाद भी कोई नहीं सुनता।

—प्रेमचन्द

सबै सहायक सबल के, कोई न निर्बल सहाय।

—अज्ञात

यद्यपि मधुमक्खियाँ निर्बल होती हैं, तथापि वे सब मिलकर मधु निकलने वाले का प्राण तक ले लेती हैं, वैसे ही निर्बल पुरुष भी एकत्रित होकर बलवान् शत्रु का नाश कर सकते हैं।

—महाभारत

कैसे निबहै निबल जन, करि सबलन सों गैर।
'रहिमन' बसि सागर विषै, करत मगर सों बैर॥

—रहीम (रहिमन विलास)

हरत दैवहु निबल अरु, दुरबल ही के प्राण।
बाघ सिंह को छाड़ि कै, देत छाग बलिदान॥

—वृन्द (वृन्द सतसई)

हीन जानि न विरोधियै, वह तौ तन दुखदाय।
रजहू ठोकर मारियै, चढ़ै सीस पर आय।।
—वृन्द (वृन्द सतसई)

शरणागत, मद-मत्त, तिय, क्लीव, निरस्त्र, अनाथ।
इन्हैं घालिवे नहिं कबौं मरद उठायो हाथ।।
—वियोगी हरि (वीर सतसई)

होते अधिक गुण निवल पै, उपजत बैर निदान।
मृग मृगमद चमरी चमर, लेत दुष्ट हत प्रान।।
— वृन्द (वृन्द सतसई)

सकत कि परसि कुरंग-सुत, कबहुँ सिंह-सुत केश।
सकत कि बंदी भेक करि, कबहुँ काल भुजगेश।।
—द्वारकाप्रसाद मिश्र (कृष्णायन)

निर्भयता

यदि उपनिषदों से बम की तरह आने वाला और बम गोले की तरह अज्ञानता के समूह पर बरसने वाला कोई शब्द है, तो वह है 'निर्भयता'।
—स्वामी विवेकानन्द

मृत्यु द्वार पर खड़ी डराती, मरने से डरने वाले को।
और, अमरता पहना जाती, जयमाला मरने वाले को।।
—नरेन्द्र (अग्निशस्य)

'कबीरा' मैं तो तब डरौं, जो मुझ ही में होय।
मीच बुढ़ापा आपदा, सब काहू में सोय।।
—महात्मा कबीर (संत सुधासार)

जग डराता है तभी तक, जिन्दगी से मोह जब तक।
मैं मरण से प्यार करता, किसलिए जग से डरूँगा।।
—हरिकृष्ण प्रेमी (रूपरेखा)

जीना हो तो मरना सीखो, निज प्रण पर मर मिटना सीखो।
डर डर कर मत समय गंवाओ, मर कर भी प्रिय अमर कहाओ॥

—श्रीमन्नारायण (रजनी में प्रभात का अंकुर)

निर्मलता

केवल निर्मल हृदय ही पूर्ण उल्लास जानता है।

—गेटे

निर्माण

निर्माण सदैव बलिदानों पर टिकता रहा है और जब तक निर्माण के लिए बलिदान की खाद नहीं दी जाती तब तक विकास भी अंकुरित नहीं होता।

—अज्ञात

इसी भूमि पर इसी धूलि पर स्वर्ग और अपवर्ग बनेगा,
इसी पंक में इसी अंक में पंकज मानव-वर्ग खिलेगा।
इसी रंक से इसी अंक से जन-जन हो सम्राट बनेगा,
इसी दीन से इसी हीन से जन-जन रूप विराट बनेगा॥

—ब्रह्मदत्त (जय मानव)

निर्लज्ज

निर्लज्ज हारकर भी नहीं हारता, मरकर भी नहीं मरता।

—जयशंकर प्रसाद (स्कन्दगुप्त)

सबसे अधिक निर्लज्ज वही है जो ईश्वर को नहीं मानता।

—अज्ञात

निर्लोभी

गरदने बेतमा बुलन्द बुवद ।
(निर्लोभी का सिर सदैव उँचा रहता है ।)

—शेख सादी

निश्चय

दृढ़ निश्चय ही विजय है ।

—कहावत

निश्चयात्मक प्रकृति के मानव ही प्रभावशाली हो सकते हैं ।

—स्वेट मार्डन

वह मानव जो अपने निश्चय में दृढ़ और अटल है, विश्व को अपने साँचे में ढाल सकता है ।

—गेटे

निष्कपटता

निष्कपटता निष्कपटता को आवाहन देती है ।

—एमर्सन

निष्कपटता आलोचना का सबसे उज्जवल रत्न है ।

—डिजरायली

निष्क्रियता

सत्य की प्रधानता के समय मनुष्य निष्क्रिय एवं शान्त तो दीखता है, किन्तु यह निष्क्रियता महान् शक्तियों के पंजीभूत होने का परिणाम होती है ।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

निष्ठा

चरित्र को, जो शक्ति द्वारा प्राणों का विस्तार करता है, निष्ठा कहते हैं।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (भावुकता और पवित्रता)

शुष्क चित्त के मृत भार को केवल निष्ठा ही वहन कर सकती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (निष्ठा)

निष्ठा एक अहैतुक पवित्र आनन्द है। इस वज्रसार आनन्द में वह नैराश्य को दूर रखती है, मृत्यु से भी नहीं डरती।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (निष्ठा)

निष्ठा हमें शुष्क कठिन पथ पर होकर अक्लान्त अध्यवसाय में लगाकर ले चलती है, वह हमें नितान्त सतर्क भी कर देती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (निष्ठाका कार्य)

निष्ठा चाञ्चल्य वर्जित भोग विरत पुण्य श्री तापसिनी हमारी रिक्तता के मध्य शक्ति, शान्ति एवं ज्योति विकीर्ण करके दारिद्रय को रमणीय बना डालती है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (निष्ठा का कार्य)

मिटे राज भय जहाँ, मिले धन और प्रतिष्ठा,
रख सकते हैं वहाँ विरल जन ही निज निष्ठा।

—मैथिलीशरण गुप्त (काबा और कर्बला)

निःस्वार्थ

निःस्वार्थता ही धर्म की कसौटी है। जो जितना अधिक निःस्वार्थी है, वह उतना ही अधिक आध्यात्मिक और शिव के समीप है।

—स्वामी विवेकानन्द

नींद

नींद एक ऐसा अथाह सागर है जिसमें हम सब अपने दुःखों को डुबो देते हैं।

—प्रेमचन्द

नीच

ऊँच निवास नीच करतूती। देखि न सकहिं पराइ विभूति।।

—तुलसीदास (रामचरित मानस)

नीच निचाई नहीं तजै, सज्जनहु के संग।
तुलसी चन्दन विटपवसि, विष नहीं तजत भुजंग।।

—तुलसीदास (रामचरित मानस)

लातहु मारे चढ़ति सिर, नीच को धूरि समान।

—तुलसीदास (रामचरित मानस)

रहई न नीच मते चतुराई।

—तुलसीदास (रामचरित मानस)

कछु कहि नीच न छोड़िए, भलो न वाको संग।
पावर डारे कीच में, उछरी बिगारै अंग।।

—वृन्द

रहिमन ओछे नरन ते तजो बैर औ प्रीति।
काटे चाटे श्वान के, दुहूँ भाँति विपरीत।

—रहीम (रहिमन विलास)

दह्यमानाः सुतीव्रेण नीचाः परयशोऽग्निना।
अशक्तास्तत् पदं गन्तुं ततो निन्दां प्रकुर्वते।।

(नीच दूसरे की यशरूपी अत्यन्त तीव्र अग्नि से जलकर और उसके पद को पा लेने में असमर्थ होकर उसकी निन्दा करते हैं।)

—चाणक्य

जो उपकार करने वाले को नीच मानता है उससे अधिक नीच दूसरा कोई नहीं।

—विनोबा भावे

नीच मानव आपदा में फँसने पर प्रारब्ध की ही निन्दा करते हैं, अपने किये कुकर्मों की नहीं।

—महाभारत

साधुन की निन्दा बिना नहीं नीच विरमात।
पियत सकल रस काग खल बिनु मल नहीं अघात॥

—दीनदयाल गिरि

गुण में औगुण खोज ही हिये न समुझै नीच।
ज्यों जूही के खेत में शूकर खोजत कीच॥

—अज्ञात कवि

शिक्षा, श्रेष्ठ संगतिहु पायी। नीच कि सकत स्वभाव विहायी!

—द्वारकाप्रसाद मिश्र (कृष्णायन)

नीति

जब बहुत आदमियों से काम लेना हो तो अविश्वास रखकर चलना गलत नीति है।

—महात्मा गांधी

नीति के विरुद्ध कोई काम करने का फल अपने तक नहीं रहता, दूसरों पर उसका और भी बुरा असर पड़ता है।

—प्रेमचन्द (कायकल्प)

हाथी के दाँत खाने के और, दिखाने के और वाली नीति पर चलना इन्सान को शोभा नहीं देता है।

—प्रेमचन्द (निर्मला)

सम्पत्ति रहते हुए भी उसकी वृद्धि के लिए प्रयत्न करना नीति निपुणता है।

—महाभारत

नीति धर्म की दासी है। धर्म पालन के लिए मानव को नीतिमान होना चाहिए और आजीवन नीति पथ न छोडना चाहिए।

—अज्ञात

नीति न तजिए राज पद पाये।

—तुलसीदास (मानस-अयो०)

न द्विषन्नश्नीयात, नद्विपतोऽन्नमश्नीयात्।

(जिससे स्वयं द्वेष करता हो, अथवा जो स्वयं से द्वेष करता हो, उसके यहाँ भोजन नहीं करना चाहिए।)

—अथर्ववेद

नाराजकस्य युद्धमस्ति।

(राजा (नायक) के विना सेना युद्ध नहीं कर सकती, भाग जाती है।)

—तैत्तिरीय ब्राह्मण

अशनया पिपासे ह वा उग्रं वचः।

(भूखे और प्यासे लोगों की आर्त्त वाचा ही अधिक उग्र होती है, इसलिए कृपालुजन उसे सुन नहीं सकते हैं।)

—तैत्तिरीय ब्राह्मण

न श्रेयांसं पापीयान् अभ्यारोहति।

(पापात्मा श्रेष्ठ लोगों को अतिक्रान्त नहीं कर सकता है।)

—ताण्ड्य महाब्राह्मण

हीना वा एते हीयन्ते ये व्रात्यां प्रवसन्ति।

(जो निषिद्ध कर्म का आचरण करते हैं, वे हीन से और अधिक हीन होते जाते हैं।)

—ताण्ड्य महाब्राह्मण

नाप्सु मूत्र पुरीषं कुर्यात्,
न निष्ठीवेत्, नवि निवसनः स्नायात् ।

(जल में मलमूत्र नहीं करना चाहिए, थूकना नहीं चाहिए और न नंगा होकर स्नान ही करना चाहिए।

—तैत्तिरीय आरण्यक

विज्ञाय फलं यो हि, कर्मत्वेवानुधावति ।
स शोचेत्फल वेलायां, यथा किंशुक सेवकः ॥

(जो व्यक्ति फल का विचार किए बिना कर्म करने लग जाता है, वह फल के समय में ऐसे ही पछताता है जैसे कि सुन्दर लाल-लाल पुष्पों को देखकर सुन्दर पुष्पों की आकांक्षा से ढाक की सेवा करने वाला मूर्ख मनुष्य।)

—वाल्मीकि रामायण

नाराजके जनपदे स्वकं भवति कस्यचित् ।
मत्स्या इव जनानित्यं, भक्षयन्ति परस्परम् ॥

(राजा यानी योग्य शासक के न होने पर देश में कोई किसी का अपना नहीं होता। सभी सदैव एक दूसरे को खाने में लगे रहते हैं। जैसे मछलियां आपस में एक दूसरे को निगलती रहती हैं।)

—वाल्मीकि रामायण

उद्वेजनीयो भूतानां, नृशंसः पाप कर्मकृत् ।
त्रयाणामपि लोकनामीश्वरोऽपि न तिष्ठति ॥

(लोगों को कष्ट देनेवाला, क्रूर कर्म करने वाला पापी शासक, चाहे त्रिभुवन का एकछत्र सम्राट ही क्यों न हो, वह अधिक काल तक टिक नहीं सकता।)

—वाल्मीकि रामायण

न नृपाः कामवृत्तयः ।
(राजा को स्वेच्छाचारी नहीं होना चाहिए।)

—वाल्मीकि रामायण

न चिरं पापकर्माण: क्रूरा लोकं जुगुप्सिता: ।
ऐश्वर्यं प्राप्य तिष्ठन्ति, शीर्णमूला इव द्रुमा: ।।

(क्रूर लोगों में निन्दित, पापी इन्सान ऐश्वर्य पाकर भी मूल से कटे वृक्ष के समान अधिक समय तक स्थिर नहीं रह सकते ।)

—वाल्मीकि रामायण

व्यसने वार्थकृच्छ्रे, वा भयेवा जीवितान्तगे ।
विमृशंश्च स्वया बुद्ध्या धृतिमान्नावसीदति ।।

(मुसीबत आने पर, पैसे का नाश होने पर और प्राणान्तक भय आने पर जो व्यक्ति धैर्यपूर्वक अपनी बुद्धि से सोच कर कार्य करता है, वही विनाश से बच सकता है ।)

—वाल्मीकि रामायण

उपकार फलं मित्रमपकारोऽरिलक्षणम् ।

(उपकार करना मित्र का लक्षण है और अपकार करना शत्रु का लक्षण है ।)

—वाल्मीकि रामायण

शोच्य: शोचसि कं शोच्यम् ?

(जो स्वयं शोचनीय स्थिति में है, वह दूसरों की क्या चिन्ता करेगा ?)

—वाल्मीकि रामायण

न विषादे मन: कार्यं विषादो दोष वत्तर: ।
विषादो हन्ति पुरुषं बालं क्रुद्ध इवोरग: ।।

(मन को विषादग्रस्त न होने दो, इससे अनेक दोष पैदा होते हैं । विषाद ग्रस्त मन पुरुष को वैसे ही नष्ट कर डालता है, जैसे क्रुद्ध हुआ सर्प अबोध बालक को ।)

—वाल्मीकि रामायण

दुर्बलो हृतमर्यादो न सेव्य इति मे मति: ।

(दुर्बल एवं मर्यादाहीन मनुष्य का संग नहीं करना चाहिए ।)

—वाल्मीकि रामायण

निर्गुण: स्वजन: श्रेयान्, य: पर: पर एव स: ।

(स्वजन यदि निर्गुण है तब भी वह अच्छा है, क्योंकि वह अपना है। पराया तो आखिर पराया ही होता है।)

—वाल्मीकि रामायण

यथा ही कुरुते राजा प्रजास्तमनुवर्तते ।

(राजा जैसा आचरण करता है, प्रजा उसी का अनुसरण करती है।)

—वाल्मीकि रामायण

दण्डेन च प्रजा रक्ष मा च दण्डमकारणे ।

(तू दण्ड द्वारा प्रजा की रक्षा कर, किन्तु बिना कारण किसी को भी दण्ड मत दे।)

—वाल्मीकि रामायण

भिन्नानामतुलो नाश: क्षिप्रमेव प्रवर्तते ।

(जो लोग विभक्त होकर आपस में फूट उत्पन्न कर लेते है, उनका शीघ्र ही ऐसा विनाश होता है, जिसकी कहीं तुलना नहीं होती।)

—महाभारत

अधर्मोत्तरता नाम कृत्स्नं व्यापादयेज्जगत् ।

(संकट से बचने के लिए उत्तरोत्तर अधर्म करते जाने की प्रवृत्ति सम्पूर्ण विश्व का नाश कर डालती है।)

—महाभारत

शत्रा .पि गुणा ग्राह्या दोषा वाच्या गुरोरपि ।

(शत्रु के भी गुण ग्रहण करने चाहिए और गुरु के भी दोष बताने में संकोच नहीं करना चाहिए।)

—महाभारत

श्वघ्नी कितवो भवति ।

(जुआरी श्वघ्नी होता है क्योंकि वह अपने ही 'स्व' (ऐश्वर्य) का नाश करता है।)

—निरुक्त

न हि स्वयम प्रतिष्ठतोऽन्यस्य प्रतिष्ठां कर्तुं समर्थः ।

(जो स्वयं अप्रतिष्ठित है, वह अन्यों को प्रतिष्ठित नहीं कर सकता ।)

—यजुर्वेदीय उव्वट भाष्य

संस्कारोज्ज्वलनार्थं हितं च पथ्य च पुनः पुनरुपदिश्यमानं न दोषाय भवति ।

(संस्कारों को उदीप्त करने के लिए हित तथा पथ्य का बारम्बार उपदेश देने में कोई दोष नहीं है ।)

—यजुर्वेदीय उव्वट भाष्य

कालाति क्रमो हि प्रत्ययं कार्य रसं पिबति ।

(समय का अतिक्रमण कार्य के ताजा रस को पी जाता है—नष्ट कर देता है ।)

—यजुर्वेदीय उव्वट भाष्य

वाचा भिरतीतानागत वर्तमान विप्रकृष्टं ज्ञायते ।

(वाणी के द्वारा ही अतीत, अनागत, और वर्तमान के दूरस्थ रहस्यों का ज्ञान होता है ।)

—यजुर्वेदीय उव्वट भाष्य

न वृथा शपथं कुर्यात् ।

(हर किसी बात पर व्यर्थ ही शपथ नहीं खानी चाहिए ।)

—मनुस्मृति

यथैवात्मा तथा पुत्रः पुत्रेण दुहिता समा ।

(पिता के लिए पुत्र आत्म-तुल्य होता है और पुत्री पुत्र तुल्य ।)

—मनुस्मृति

अक्लेशेन शरोस्य कुर्वीत धन संचयम् ।

(स्व शरीर के स्वास्थ्य को क्षति न पहुँचाते हुए धन को अर्जित करना चाहिए ।)

—मनुस्मृति

स्ववीर्यं बलवत्तरं ।
(अपना सामर्थ्य ही सब से श्रेष्ठ बल है ।)

—मनुस्मृति

युग रूपा हि ब्राह्मणाः ।
(विद्वान् (ब्राह्मण) युग के अनुरूप होते हैं ।)

—पराशरस्मृति

कारणगुण पूर्वकः कार्यगुणो दृष्टः ।
(कारण के गुणों के अनुसार ही कार्य के गुण देखे जाते हैं ।)

—वैशेषिक दर्शन

कार्यमण्वपि काले तु कृत मेत्युपकारताम् ।
महानप्युपकारोऽपि रिक्ततामेत्य कालतः ॥
(वक्त पर थोड़ा भी काम किया जाए तो वह बहुत अधिक उपकारक होता है । असमय में बड़ा से बड़ा उपकार भी निष्फल चला जाता है ।)

—योगवाशिष्ठ (वैराग्य प्रकरण)

विषाण्यमृततां यान्ति सन्तताभ्यासयोगतः ।
(लगातार (औषधिनिमित्तक) अभ्यास से विष भी अमृत बन जाता है ।)

—योगवाशिष्ठ (निर्वाणप्रकरण)

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।
(जहाँ नारी का सम्मान होता है, वहाँ देवता वास करते हैं ।)

—मनुस्मृति

नाऽधार्मिके वसेद् ग्रामे ।
(अधार्मिक गाँव में वास नहीं करना चाहिए ।)

—मनुस्मृति

नावमन्येत कञ्चन ।
(किसी का भी अपमान नहीं करना चाहिए ।)

—मनुस्मृति

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलं ।

(जिस कुल में अपमानादि के कारण कुलवधुएं शोकाकुल रहती हैं, वह कुल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

—मनुस्मति

बकवच्चिन्तयेदर्थान् सिंहवच्च पराक्रमेत् ।

(बगुले के समान एकाग्रता से अपने प्राप्तव्य लक्ष्य का चिन्तन करना चाहिए तथा सिंह के समान साहस के साथ पराक्रम करना चाहिए ।)

—मनुस्मति

आपदर्थ धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि ।

(मुसीबत को दूर करने के लिए धन इकट्ठा करके रखना चाहिए । स्त्री की रक्षा हेतु समय पर धन का मोह भी त्याग देना चाहिए ।)

—मनुस्मति

वैर पंचसमुत्थानं तच्च बुध्यन्ति पण्डिताः ।
स्त्री कृतं वास्तुजं वाग्जं ससापत्ना परधजम् ॥

(वैर पाँच कारणों से हुआ करता है, इस बात को विद्वान् पुरुष भली भांति जानते हैं—१. स्त्री के लिए २. घर और धरती के लिए ३. कठोर वाणी के कारण ४. जातिगत द्वेष के कारण और ५. अपराध के कारण ।)

—महाभारत

नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयात् ।

(बिना पूछे किसीके बीच में व्यर्थ नहीं बोलना चाहिए ।

—मनुस्मति

वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी ।
एतानि मान्यास्थानानि गरीयो यद्‌यदुत्तरम् ॥

(धन, बन्धु, अवस्था, कर्म एवं विद्या—ये पाँचों सम्मान के स्थान हैं । किन्तु इनमें क्रमशः एक से दूसरा स्थान उत्तरोत्तर श्रेष्ठ माना गया है ।)

—मनुस्मति

सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव।

(विद्वान सम्मान को विष के समान समझ कर सदैव उससे डरता रहे।)

—मनुस्मृति

अवमन्ता विनश्यति।

(अपमान करने वाला स्व पाप से स्वयं नष्ट हो जाता है।)

—मनुस्मृति

नीतिज्ञ

यस्तु पक्वमुपादत्ते काले परिणतं फलम्।
फलाद् रसं स लभते बीजाच्चैव फलं पुनः॥

(जो वक्त पर स्वयं पके हुए फलों को ग्रहण करता है, समय से पूर्व कच्चे फलों को नहीं, वह फलों से मधुर रस पाता है और भविष्य में बीजों को बोकर पुनः फल प्राप्त करता है।)

—महाभारत

यथा मधु समादत्ते रक्षन् पुष्पाणि षट्पदः।
तद्वदर्थान् मनुष्येभ्य आदद्याद विहिंसया॥

(जैसे भ्रमर पुष्पों की रक्षा करता हुआ ही उनका मधु ग्रहण करता है, वैसे ही राजा भी प्रजाजनों को कष्ट दिए बिना ही कर के रूप में उन से धन ग्रहण करे।)

—महाभारत

धनात्कुलं प्रभवति धनाद् धर्मः प्रवर्धते।

(धन से कुल की प्रतिष्ठा बढ़ती है और धन से धर्म की वृद्धि होती है।)

—महाभारत

शारीरं मानसं दुःखं योऽतीतमनुशोचति ।
दुःखेन लभते दुःखं द्वावनर्थौ च विन्दति ।।

(जो मानव अतीत के बीते हुए शारीरिक या मानसिक कष्टों के लिए बारम्बार दुःख प्रगट करता है, वह एक दुःख से दुःख को प्राप्त होता है। उसे दो-दो अनर्थ भोगने पड़ते हैं।)

—महाभारत

नाच्छित्वा परमर्माणि नाकृत्वा कर्म दारुणं ।
नाहत्वा मत्स्यघातीव प्राप्नोति महतींश्रियम् ।।

(दूसरों को मर्मघाती चोट पहुँचाए बिना, अत्यन्त क्रूर कर्म किए बिना तथा मछेरों की भाँति बहुतों के प्राण लिए बिना कोई भी बड़ी भारी सम्पत्ति अर्जित नहीं कर सकता।)

—महाभारत

भीतवत् संविधातव्य यावद् भयमनागतं ।
आगतं तु भयं दृष्ट्वा प्रहर्तव्यम भीतवत् ।।

(जब तक अपने ऊपर भय न आए, तभी तक डरते हुए उसे टालने का प्रयास करना चाहिए; किन्तु जब भय सामने आ ही जाए तो फिर निर्भय होकर उसका यथोचित प्रतिकार करना चाहिए।)

—महाभारत

धिग् बलं क्षत्रिय बलं ब्रह्मतेजो बलं बलम् ।

(क्षत्रिय बल तो नाम मात्र का ही बल है, उसे धिक्कार है। ब्रह्म-तेज जनित बल ही वास्तविक बल है।)

—महाभारत

नादेशकाले किंचिद स्याद् देशकालौ प्रतीक्षताम् ।

(अयोग्य देश तथा अनुपयुक्त काल में कुछ भी प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता; अतः कार्यसिद्धि के लिए उपयुक्त देश-काल की प्रतीक्षा करनी चाहिए।)

—महाभारत

असन्तोषः श्रियो मूलम् ।
(असन्तोष ही लक्ष्मी-प्राप्ति का मूल है ।)

—महाभारत

नो उद्विग्नश्चरते धर्मं, नोद्विग्नश्चरते क्रियाम् ।
(उद्विग्न पुरुष न धर्म का आचरण कर सकता है, और न किसी लौकिक कर्म का ही ठीक प्रकार से सम्पादन कर सकता है ।)

—महाभारत

ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं श्रुतम् ।
तयोर्विवाहः सख्यं च न तु पुष्ट विपुष्टयोः ।।

(जिनका ऐश्वर्य (धन) समान है, जिनकी विद्या एक सी है, उन्हीं में विवाह और मैत्री का सम्बन्ध ठीक हो सकता है । एक-दूसरे से ऊँच-नीच में स्नेह-सम्बंध कभी सफल नहीं हो सकते ।)

—महाभारत

शूराणाम् च नदीनाम् च दुर्विदाः प्रभवाः किल ।
(शूरवीरों और नदियों की उत्पत्ति के वास्तविक कारण को जान लेना बहुत मुश्किल है ।)

—महाभारत

छिन्न मूले ह्यधिष्ठाने सर्वे तज्जीविनो हताः ।
कथं नु शाखास्तिष्ठेरंश्छिन्नमूलो वनस्पतौ ।।

(यदि मूल आधार नष्ट हो जाए, तो उसके आश्रित रहने वाले सभी लोग स्वतः ही नष्ट हो जाते हैं । यदि वृक्ष की जड़ काट दी जाए तो फिर उसकी शाखाएँ कैसे रह सकती हैं ।)

—महाभारत

नीतिवान नीति न तजै, सहै भूख तिस त्रास ।
ज्यों हंसा मुक्ता बिना, वनसर करै निवास ।।

—बुधजन (बुधजन सतसई)

न परेसं विलो मानि, न परेसं कताकतं।
अत्तनो व अवक्खेय्य, कतानि अकतानिच ।।

(दूसरे की त्रुटियां नहीं देखनी चाहिए, उसके कृत्य-अकृत्य के फेर में नहीं पड़ना चाहिए। अपनी ही त्रुटियों का तथा कृत्य-अकृत्य का विचार करना चाहिए।

—महात्मा बुद्ध (धम्मपद)

नीति तजै न सतपुरुष, जो धन मिलै करोर।
कुल तिय बनै न कंचनी, भुगतै विपदा घोर ।।

—बुधजन (बुध सतसई)

हृदय-स्रोत बहता रहे, प्रेम-सलिल से पूर्ण।
सेवा में नित रत रहे, यही नीति सम्पूर्ण ।।

—श्रीमन्नारायण (रजनी में प्रभात का अंकुर)

नीतिज्ञ के लिए यश और धन की कमी नहीं।

—प्रेमचन्द (भाड़े का टट्टू)

नीतिज्ञ के लिए अपना लक्ष्य ही सब कुछ है, आत्मा का उसके सामने मूल्य नहीं।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

नीति-शास्त्र

नीतिशास्त्र ही इस पृथ्वी का अमृत है, यही उत्तम नेत्र है और यही श्रेय प्राप्ति का सर्वोच्च उपाय है।

—महाभारत

नीरोग

सब से बढ़कर निरोग वही है जो निश्चिन्त है।

—अज्ञात

नूतनता

पुरातनता का यह निर्मोक,
सहन करती न प्रकृति पल एक।
नित्य नूतनता का आनन्द,
किये हैं परिवर्तन में टेक।

—जयशंकर प्रसाद (कामायनी)

नृत्य

नृत्य भी शरीर की चेष्टाओं पर आश्रित होने के कारण मूर्ति के बंधनों से सर्वथा मुक्त नहीं है। यह एक प्रकार की अभिनीत गति है।

—महादेवी वर्मा (दीपशिखा)

समस्त कलाओं में नृत्य सबसे महान् है। सबसे ज्यादा प्रभाव डालने वाली और सबसे ज्यादा सुन्दर कला है। क्योंकि यह जीवन का केवल अनुवाद अथवा पृथक्करण ही नहीं है, यह स्वयं ही जीवन है।

—हेवलाक इलिस

नेक-नेकी

जितने दिन जिन्दा हो, उसे गनीमत समझो और इससे पहले कि लोग तुम्हें मुर्दा कहें, नेकी कर जाओ।

—शेख सादी (गुलिस्ताँ)

नेकी अगर करने वाले के दिल में रहे तो नेकी है, बाहर निकल आये तो बदी है।

—प्रेमचन्द (गोदान)

दुश्मन के साथ नेकी करना रोगियों की सेवा से छोटा काम नहीं है।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

नेकनामी और बदनामी सब ढकोसला है।

—प्रेमचन्द (प्रतिज्ञा)

सौजन्यधन्यजनुषः पुरुषाः परेषां,
दोषान् विहाय गुणमेव गवेषयन्ति।
त्यक्त्वा भुजंगमविषं हि पटीरगर्भात्,
सौगन्ध्यमेव पवनाः परिवाहयन्ति ॥

(वे भले मानव धन्य हैं जो दूसरे के दोषों को छोड़कर गुणों को ही खोजते रहते हैं। मलयाचल के चंदन वृक्ष पर लिपटे हुए सर्पों के विष को न ग्रहण कर समीर चन्दन की सुगन्धि का वहन करती है।)

—अज्ञात

सम्मान नेकी का उपहार है।

—सिसरो

नेकी का उपहार नेकी है।

—एमर्सन

बदी करने के अवसर दिन में सौ बार मिलते हैं; किन्तु नेकी करने का अवसर वर्ष में सिर्फ एक बार मिलता है।

—वाल्टेयर

हमारा जीवन क्षणिक है; किन्तु उसे अनन्त तक फैलाना सद्गुण का कर्म है।

—शेक्सपियर

नेक बनने में सारी उम्र लग जाती है, बदनाम होने में तो एक दिन भी नहीं लगता। ऊपर चढ़ना कैसा कठिन है? इसमें कितना समय लगता है? मगर गिरना कितना आसान है? इसमें परिश्रम कुछ नहीं करना पड़ता।

—अज्ञात

नेता

समाज का नेता बनने के लिए आवश्यक है कि समाज की ओर पीठ करके चलो।

—हेवलॉक एलिस

तर्क और निर्णय नेता के गुण हैं।

—टैसीटस

नेता सागर में यान के सदृश है, वह आता है और चला जाता है, किन्तु जनता सागर की भाँति है जो सदा रहती है।

—मॉरिस हिंडस

लोगों का सही रास्ता बनाना नेताओं का काम है।

—विनोबा भावे

आ त्वाऽहार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।
विशस्त्वा सर्वा वाच्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत्॥

(हे राजन्! तुम राष्ट्र के अधिपति बनाए गए हो। तुम इस राष्ट्र के सच्चे स्वामी बनो, तुम अविचल एवं स्थिर होकर रहो। प्रजा तुम्हारे प्रति अनुरक्त रहे, तुम्हें चाहती रहे। तुम्हारे से कदापि राष्ट्र का अधःपतन न हो, अमंगल न हो।)

—ऋग्वेद

अग्ने! नय सुपथा रायेऽअस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।

(सभी सन्मार्गों के ज्ञाता हे अग्रणी नेता! तू हमें ऐश्वर्य के लिए श्रेष्ठ राह से ले चल।)

—यजुर्वेद

राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम्।
(राष्ट्र को स्थिरता से धारण करो।)

—ऋग्वेद

ध्रुवा द्यौर् ध्रुवा पृथिवी ध्रूवास: पर्वता इमे।
ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम्॥

(यह गगन स्थिर है, यह धरा स्थिर है, पर्वत स्थिर है और क्या, यह समग्र जगत स्थिर है। इसी तरह यह प्रजा की पालना करने वाला राजा भी सदैव स्थिर रहे।)

—ऋग्वेद

संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।

(हे शक्तिशाली अग्रणी नेता! आप ही ठीक प्रकार से संघटित करते हो।)

—ऋग्वेद

सहस्रम्भर: शुचि जिह्वोऽग्नि:।

(समाज के अग्रणी नेता को पवित्र जिह्वा वाला और सहस्रों का पालन-पोषण करने वाला होना चाहिए।)

—यजुर्वेद

जङ्घाभ्यां पदभ्यां धर्मोऽस्मि
विशि राजा प्रतिष्ठित:।

(मैं अपनी जंघाओं और पैरों से धर्म रूप हूँ। अत: मैं अपनी प्रजा में धर्म से प्रतिष्ठित राजा हूँ)।

—यजुर्वेद

यजमानेऽव: शिरसि पतिते स देशोऽव: शिरा पतति।

(नेता के औंधे मुख गिरने पर राष्ट्र भी औंधे मुख गिर जाता है।)

—गोपथ ब्राह्मण

यदि नेता चरित्रवान् नहीं है तो अनुयायियों में उसके प्रति श्रद्धा रखना सम्भव नहीं। पूर्णतया शुद्ध चरित्र के आधार पर अटूट श्रद्धा और विश्वास टिक सकते हैं।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

एषा ब्रह्नाणमनुगाथा-यतो यत आवर्तते तत्तद् गच्छति ।

(नेता के लिए यह गाथा प्रसिद्ध है कि जहाँ से ही हताश-निराश होकर व्यक्ति वापस लौटने लगता है, वहाँ वह अवश्य ही सहायता के लिए पहुँच जाता है।)

—छान्दोग्य उपनिषद्

जितेन्द्रियो हि शक्नोति वशे स्थापयितुं प्रजाः ।

(जितेन्द्रिय शासक ही प्रजा को अपने वश में कर सकता है)

—मनुस्मृति

राजा हि युग मुच्यते ।

(वास्तव में राजा ही युग का निर्माता होता है।)

—मनुस्मृति

नेता केवल एक जन्म में नहीं बन जाता। वह जन्मजात ही होता है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

नेता की वास्तविक कसौटी यह है कि वह बहुत भिन्न रुचि और प्रवृत्ति के लोगों को भी उनकी समान वेदनाओं-भावनाओं के आधार पर एकत्र रख सकता है या नहीं। और यह कार्य बड़े सहज रूप में ही होना है, बुद्धिपूर्वक प्रयत्न करके नहीं।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

ईर्ष्या और स्वार्थ का लवमात्र लेश न रहने पर ही तुम नेता बन सकते हो। जन्मजात और निःस्वार्थ व्यक्ति ही नेता हो सकता है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

वह कभी नेता नहीं बन सकता जिसके स्नेह में थोड़ा भी ऊँच-नीच का भेद है। जिसका स्नेह अनन्त है, जिसमें ऊँच-नीच का भेद नहीं, समस्त संसार उसके चरणों पर लोटता है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

सर्वोत्तम नेता वही है जो एक शिशु के समान नेतृत्व करता है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

सब्बा ता जिम्हं गच्छन्ति, नेत्ते जिम्हं गते सति ।

(नेता के कुटिल चलने पर सब के सब अनुयायी भी कुटिल हो चलने लगते हैं ।)

—महात्मा बुद्ध (अंगुत्तर निकाय)

सब्बं रट्ठं दुक्खं सेति, राजा चे होति अधम्मिको ।
सब्बं रट्ठं सुखं सेति, राजा चे होति धम्मिको ॥

(राजा यदि अधर्मी होता है तो समूचा राष्ट्र दुखित हो जाता है। और यदि राजा धार्मिक होता है, तो सारा का सारा राष्ट्र सुखी हो जाता है।)

—महात्मा बुद्ध (अंगुत्तरनिकाय)

नेता निम्न दिन-रात शांति चिन्तन में ।
कवि-कलाकार ऊपर उड़ रहे गगन में ॥

—रामधारीसिंह 'दिनकर'

जोर-जोर से वह चिल्लावे, माल दूसरों का खा जावे ।
लेकर के फिर कभी न देता, ऐ सखी वन्दर, ना सखि नेता ॥

—बरसानेलाल (रंग और व्यंग्य)

वस्तु विदेशी पहिनो, खाओ, देश-दैन्य को खूब बढ़ाओ ।
जैसे-तैसे कर लो नाम, यही लीडरों का है काम ॥

—रामचरित उपाध्याय (राष्ट्र भारती)

जिसके हों ऊँचे विचार पक्के मनसूबे ।
जो होवे गम्भीर भीड़ के पड़े न ऊबे ॥
हमें चाहिए, आत्म-त्याग-रत ऐसा नेता ।
रहे जाति-हित में जिसके रोयें तक डूबे ॥

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (पद्यप्रसून)

नेतृत्व

भूतकाल का कष्ट और कुर्बानी भविष्य के नेतृत्व के लिए हर दशाएँ पासपोर्ट नहीं देती।

—सुभाषचन्द्र बोस

नेतृत्व करने का थोड़ा-सा भी दिखावा अन्यों से ईर्ष्या को भड़काकर सब कुछ चौपट कर डालता है।

—विवेकानन्द (उत्तिष्ठत, जाग्रत)

नेत्र, नैन (दे० आँख)

वर जीते सर मैन के, ऐसे देखे मैं न।
हरिनी के नैतान ते, हरि नीके ये नैन॥

—बिहारी

जूठे जानि न संग्रहे, मन मुँह निकसे बैन।
याहीं तें मानो किये, बातन को विधि नैन॥

—बिहारी

लाज लगाम न मानहीं, नैना मो बस नाहि।
ये मुँह जोर तुरंग लौं, ऐंचतहुं चलि जाहि॥

—बिहारी

तनक किरकिरी के परे, नैन होत बेचैन।
वे नैना कैसे जियें, जिन नैंनन विच नैन॥

—बिहारी

दृगन लगत बेचत हियो, विकल करत अंग आन।
ये तेरे सब ते विषम, ईछन, तीछन बान॥

—बिहारी

नेत्र ही ज्ञान का द्वार है।

—अज्ञात

नैंना नेकु न मानही, कितो कहौं समुझाय।
तन-मन हारे हु हँसैं, तिनसों कहा वसाय।।

—बिहारी

रहिमन तीर की चोट ते, चोट परे बचि जाय।
नैंन बान की चोट ते, धन्वंतरि न बचाय।।

—रहीम

नैतिकता का ऐसा आग्रह जो हर कहीं अनीति सूँघने को व्यग्र रहता है, मुझे लगता है कि एक ही साथ अश्लीलता और दंभ पैदा किए बिना नहीं रह सकता।

—जैनेन्द्रकुमार (इतस्ततः)

नैतिकता में से यदि यह नमूना ही प्राप्त होता है जो कर्म की और लोक की बागडोर को हाथ में थाम नहीं पाता, हाथ उसके काँप जाते हैं, तो निश्चय है कि नीति को ताक पर रख कर चलने वाली खुली शक्ति मैदान के लिए रह जायेगी और दुनिया की लगाम को वह हाथ में लेकर चलायेगी।

—जैनेन्द्रकुमार (इतस्ततः)

नौकर

अपने नौकर से बहुत मेल-जोल मत बढ़ाओ। शुरू में स्नेह-सा लगता है, लेकिन आखिर में यह नफरत पैदा करता है।

—फुलर

महान् व्यक्तियों द्वारा की गई नेकी के बंधनों में बंधकर हम उनके ऐच्छिक नौकर हो जाते हैं।

—सर पी० सिडनी

नौकरी

जो सबसे अधिक सेवा करता है, वह सबसे अधिक लाभ उठाता है।

—शेल्डन

उत्तम खेती, मध्यम बान।
निकृष्ट चाकरी, भीख निदान॥

—कहावत

जो इंसान की सेवा करते हैं, वे ही ईश्वर की सबसे अच्छी सेवा करते हैं।

—केरोलियन नारटन

नृप सों सचिव सों सब मुसाहेब-गगन सो डरते नहीं।
पुनि बिटहु जे अति पास के तिनकों कह्यौं करते रहौ॥
मुख लखत बीतत दिवस निसि भय रहत संकित प्रान है।
निज उदर पूरन हेतु सेवा श्वानिवृत्ति समान है॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (भारतेन्दु नाटकावली)

न्याय

न्याय में देर करना न्याय को अस्वीकार करना है।

—ग्लेडस्टोन

न्याय के दोनों ही आदेश हैं; दण्ड और दया।
क्रोध से न्याय नहीं होता।

—जयशंकर प्रसाद (विशाख)

एक राजा का सम्मान एक क्षुद्र न्याय से कहीं ज्यादा महत्त्व की वस्तु है।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

न्याय करना उतना कठिन नहीं है, जितना अन्याय का शमन करना।

—प्रेमचन्द (रंगभूमि)

न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसे चाहती है नचाती है।

—प्रेमचन्द (नमक का दारोगा)

न्याय वह है जो कि दूध का दूध, पानी का पानी करदे, यह नहीं कि खुद ही कागज़ों के धोखे में आ जाये, खुद ही पाखण्डियों के जाल में फँस जाये।

—प्रेमचन्द (ईश्वरीय न्याय)

न्याय केवल धर्मान्ध मनुष्यों के मन का समझौता है, संसार में इसका अस्तित्व नहीं। बाप ऋण लेकर मर जाय, लड़का कौड़ी-कौड़ी भरे। विद्वान् लोग इसे न्याय कहते हैं।

—प्रेमचन्द (ज्वालामुखी)

न्याय को प्रेम कलंकित नहीं कर सकता।

—प्रेमचन्द

विश्व में न्याय के साथ अन्याय का मिश्रण रहना हमारे चरित्र विकास के पक्ष में अत्यन्त आवश्यक है।

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर (दुःख)

न्याय चलत बिगरै कछू, तौ न करौ अफसोस।
धार परत जो राजपथ, तौ न देत कोउ दोस॥

—वृन्द (वृन्द सतसई)

पहला त्यागमय दिव्य कर्म न्याय करना है।

—रस्किन

हम प्यार का दरिया बहा सकते हैं पर न्याय के नाम पर नानी मर जाती है।

—रस्किन

बिना बुद्धिमता के अन्याय असम्भव है।

—फ्राउड

न्याय में देर करना अन्याय है।

—लेंडर

सच्चाई का कार्य में बदल जाना न्याय है।

—डिजरायली

न्याय के समान कोई गुण वास्तव में ईश्वर तुल्य और अज्ञात नहीं है।

—एडीसन

ईश्वरीय न्याय की चक्की यद्यपि मंद गति से चलती है, किन्तु चलती अवश्य है।

—जार्ज हर्बर्ट

विश्व में झूठी तुलाओं का सम्मान होता है और न्याय दीनारों के मोल बिकता है।

—अज्ञात

आज का हमारा न्याय तो बुरी तरह बेजबान और खुलेआम अंधा है। बेकमा की दीर्घ मार से वह पीड़ित है।

—रस्किन

अनुक्रमणिका

ग्रंथकारों की नामावली

०

... वेद वेदांग विद्यालय
ग्रन्थालय 402
आगत क्रमांक ...

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी।
आगत क्रमांक 2074
दिनांक ...